कुरुक्षेत्र

PUBLICATIONS DIVISION
Ministry of I. & B.
LIBRARY

22 MAR 1956

मार्च १९५६

●

मूल्य चार आना

सयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव श्री डाग हेमरशोल्ड फ़रीदाबाद सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्र के एक गाँव की सभा में भाषण दे रहे हैं। पृष्ठ भाग में गाँववालों के सहकारी प्रयास से बनाया गया पंचायत घर है

कुरुक्षेत्र

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन का मासिक मुखपत्र

वर्ष १] मार्च १९५६ [अंक ५

विषय-सूची

आवरण चित्र [कलाकार : सुशील सरकार]		
समाज शिक्षा ! [व्यंग्य-चित्र]	मैमग्रल	२
समाजवाद और सामुदायिक विकास	श्रीमन्नारायण	३
हमने कितनी सफलता प्राप्त की	रघुवीर सहाय	५
काश्तकारी सुधार की आवश्यकता क्यों ?	हर्षदेव मालवीय	६
प्रकाश और विश्वास [कहानी]	चक्रवर्ती राजगोपालाचारी	८
जहाँ ज़मीन आसमान बदल रहे हैं	कौशल्या देवी	१०
भविष्य के बारे में कुछ विचार	एन० एम० लिंगम्	१२
रंगोत्सव [कविता]	प्रयागनारायण त्रिपाठी	१४
हमारे ग्रामोद्योग [चित्रावली]	...	१५-१८
पश्चिम बंगाल की कहानियाँ	मुकुल गुप्त	१९
एक बाल प्रदर्शनी	सुशील वर्मा	२२
एक महान् परिवर्तन	एस० विश्वनाथन्	२५
दूसरी पंचवर्षीय योजना का प्रारूप	...	२८
दूसरी योजना में हमारा कार्यक्रम	...	३०
प्रगति के पथ पर	...	३१

सम्पादक :
केशवगोपाल निगम
[सहकारी सम्पादक, प्रकाशन विभाग]
उप-सम्पादक : *मनोहर जुनेजा*

मुख्य कार्यालय
ओल्ड सेक्रेटेरिएट,
दिल्ली—८

वार्षिक चन्दा २॥)
एक प्रति का मूल्य ।)

विज्ञापन के लिए
बिजनेस मैनेजर, पब्लिकेशन्स डिवीज़न
दिल्ली—८ को लिखें

समाज शिक्षा !

हमारे समाज शिक्षा संगठनकर्ताओं को ललित कलाओं,

नाटक,

संगीत,

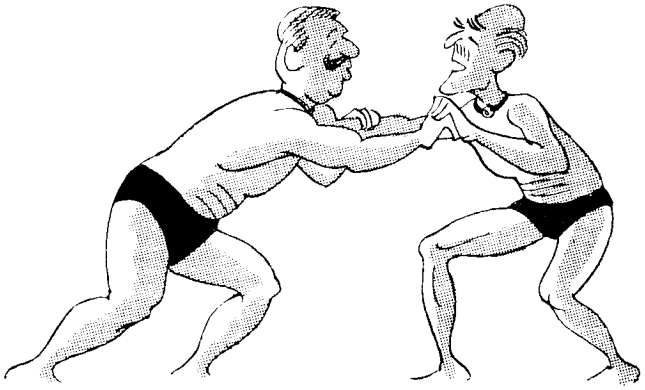

कुश्ती,

और खेलों की विशेष शिक्षा दी जाएगी ।

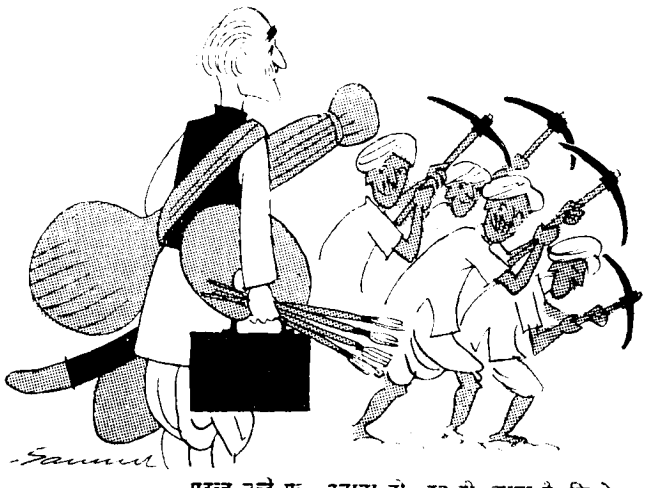

परन्तु उन्हें यह बताना तो रह ही जाता है कि वे हमारे कार्यक्रम में क्या योगदान दे सकते हैं ।

समाजवाद और सामुदायिक विकास

श्रीमन्नारायण

इसमें कोई सन्देह नहीं कि पहली पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं ने सारे देश के ग्राम्य जीवन में एक सीमा तक क्रान्ति लाने में काफ़ी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अब तक एक लाख से अधिक गाँव विकास योजनाओं के अन्तर्गत आ चुके हैं और यह सुझाव रखा गया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सारे देश में इनका जाल बिछा दिया जाए। यद्यपि सामुदायिक विकास योजनाओं के संगठन और कार्यक्रम का आधार मज़बूत है, परन्तु यह पूरी तरह दोषमुक्त नहीं है। यह हमारा कर्तव्य है कि हम इन दोषों का विश्लेषण करके दूसरी पंचवर्षीय योजना को इन से मुक्त करें।

राष्ट्र ने यह निश्चित रूप से निर्णय कर लिया है कि अगले दस वर्षों में समाज का ढाँचा समाजवादी आधार पर स्थापित कर लिया जाए। इसलिए यह आवश्यक है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हमारी सभी परियोजनाओं और विकास योजनाओं का उद्देश्य इस आधारभूत लक्ष्य को प्राप्त करना हो। जहाँ तक सामुदायिक विकास योजनाओं का सम्बन्ध है, कृषकों और अन्य सभी गाँववालों को इनसे अनेक लाभ पहुँचे हैं। परन्तु चालू योजनाओं से उन्हीं को अधिक सहायता मिल रही है जिनके पास कुछ है। जिनके पास कुछ भी नहीं है, उनको कोई सहायता नहीं मिल रही। इसलिए सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में इस ढंग से प्राण फूँकने की आवश्यकता है कि 'जिनके पास कुछ है' उनकी अपेक्षा 'अकिंचनों' की आवश्यकताओं को प्राथमिकता मिले। उदाहरण के लिए विभिन्न उद्देश्यों के लिए ऋण देने के नियम इस प्रकार बनाए जाएँ कि हमारे समाज के अपेक्षाकृत दरिद्र और ज़रूरतमन्द वर्ग उनसे लाभ उठा सकें। मेरे विचार में यह अच्छा हो कि यदि ऐसे ऋण जिन लोगों के पास कुछ सम्पत्ति है उन्हें न देकर समाज के अपेक्षाकृत दरिद्र वर्ग की सहकारी समितियों को दिए जाएँ। ग्राम्य और कुटीर उद्योगों का जाल बिछा कर बेरोज़गारी और कम-रोज़गारी को नष्ट करने पर अधिक बल दिया जाए। यह स्वीकार करने में कोई झिझक नहीं होनी चाहिए कि अभी तक सामुदायिक विकास-योजनाओं ने रोज़गार दिलाने की ओर उचित ध्यान नहीं दिया है। यदि बेरोज़गारी की समस्या को हम और अच्छी तरह नहीं सुलझा सके, तो दूसरी पंचवर्षीय योजना जनता में अपेक्षित उत्साह जगाने में असफल रहेगी। यदि सामान्य जनता से यह आशा की जाती है कि वह योजना की सफलता के लिए सक्रिय सहयोग दे, तो उसमें यह विश्वास पैदा करना होगा कि उसकी आधारभूत समस्याएँ धीरे-धीरे हल की जा रही हैं। विश्वास की इस भावना की अनुपस्थिति में आर्थिक आयोजन एक फ़ज़ूलखर्ची है जिसे भारत जैसा दरिद्र देश वहन नहीं कर सकता।

इस बात को ध्यान में रखते हुए मेरा सुझाव है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं को अपनी अधिकांश शक्ति भूदान आन्दोलन द्वारा भूमि के पुनः वितरण की ओर लगानी चाहिए। देश में दूरगामी भूमि सुधार चालू करने के लिए स्वस्थ वातावरण उत्पन्न करने में आचार्य विनोबा भावे बहुत सफल हुए हैं। उन्होंने अब तक ४० लाख एकड़ से अधिक भूमि इकट्ठी कर ली है जो अब भूमिहीन किसानों में बाँटी जा सकती है। इस के लिए विनोबा भावे ने यह लक्ष्य रखा है कि सन् १९५७ के अन्त तक यह पुनः वितरण पूरा हो जाना चाहिए। सामुदायिक योजना प्रशासन को चाहिए कि वह अपने अधिकारियों और परामर्शदात्री समितियों को विशेष हिदायतें दे कि १९५७ के अन्त तक इस पुनः वितरण के कार्य को पूरा करने के लिए वे अपनी सारी शक्ति लगा दें। ग्राम्य और कुटीर उद्योगों के विकास के लिए औद्योगिक सहकारी समितियों की स्थापना भी ज़रूरी है। बड़े पैमाने पर एक कारख़ाना या मिल लगाना सरल है। परन्तु छोटे पैमाने के और ग्राम्य उद्योगों का संगठन काफी कठिन है, क्योंकि ऐसे संगठन में हमारा मशीनों की अपेक्षा मनुष्यों से वास्ता पड़ता है। उदाहरण के लिए, अम्बर चर्खा हमारी जनता के लिए अधिक रोज़गार उपलब्ध करा सकता है। परन्तु वस्त्रोत्पादन के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए समस्त देश में इसके उत्पादन और वितरण का संगठन करने के लिए काफ़ी परिश्रम अपेक्षित है। इस उद्देश्य के लिए अपेक्षित विशाल संगठन की स्थापना में सामुदायिक विकास-योजनाएँ और राष्ट्रीय विस्तार सेवाएँ महत्वपूर्ण भाग ले सकती हैं।

देश की शिक्षण पद्धति का आधुनिकीकरण और हमारे विकास और शिक्षा कार्यक्रमों का उचित संयोजन करना भी

आवश्यक होगा। महात्मा गान्धी हमें बता चुके हैं कि गाँवों के पुनर्निर्माण के हमारे कार्यक्रम अन्ततः बेसिक शिक्षा की सफलता पर ही निर्भर करते हैं। यदि हम एक ओर तो सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्रों में कठोर परिश्रम और श्रमदान पर बल देते रहे और दूसरी ओर अपने बच्चों को पुराने ढर्रे की किताबी शिक्षा दिलाते रहे, तो हमारा विकास कार्यक्रम भानमती का पिटारा बन कर रह जाएगा। विकास और कठोर परिश्रम के लिए अपेक्षित वातावरण तभी पैदा हो सकता है जबकि हम अपनी शिक्षण पद्धति में पुस्तकों की बजाय काम पर बल देंगे। अब तक सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्रों में बेसिक स्कूलों की स्थापना पर उचित ध्यान नहीं दिया गया है। अगली योजना की अवधि में सभी वर्तमान स्कूलों को बेसिक स्कूलों में परिवर्तित करना और केवल इसी ढंग के नए स्कूल खोलना बहुत ज़रूरी होगा। अन्यथा हमारी योजनाओं में परस्पर-विरोध उत्पन्न हो जाएगा और प्रगति की गति निश्चित रूप से धीमी पड़ जाएगी।

ये कुछ सुझाव हैं जो मैं योजना कमीशन और सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन के सम्मुख रखना चाहता हूँ। यदि इन सुझावों पर ध्यानपूर्वक विचार किया जाए और इन्हें सामुदायिक विकास कार्यक्रम में शामिल कर लिया जाए, तो मैं निस्सन्देह कह सकता हूँ कि हमें जनता का अधिकाधिक सहयोग मिलेगा। एक बार लोगों को यह विश्वास हो जाए कि इन कार्यक्रमों से उनका वास्तविक लाभ होगा, तो वे फिर पीछे नहीं रहेंगे। अब तक स्थानीय विकास योजनाओं में जनता ने जो असामान्य सहयोग दिया है, उससे हमें यह विश्वास हो जाना चाहिए कि लोकतन्त्र की नींव मज़बूत है। सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के लिए यह उचित होगा कि वे सभी स्तरों पर जनता का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करें। इसके बारे में मेरा यह सुझाव है कि सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन के अन्तर्गत एक अखिल भारतीय सलाहकार समिति बनाई जानी चाहिए। राज्य, ज़िले और खण्ड के स्तर पर भी ऐसी सलाहकार समितियाँ होनी चाहिएँ। इन सभी सलाहकार समितियों के प्रधान गैर-सरकारी होने चाहिएँ। जनता में अभी तक यह भावना है कि सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन सोलह आने सरकारी संस्था है। अधिकाधिक नौकरशाही स्वस्थ लोकतंत्री परम्पराओं को जन्म नहीं दे सकती। यह ज़रूरी है कि सभी स्तरों पर अधिक से अधिक गैर-सरकारी सहयोग प्राप्त किया जाए और मुझे उम्मीद है कि बिना समय नष्ट किए ऐसा किया जाएगा।

★

प्रगति !

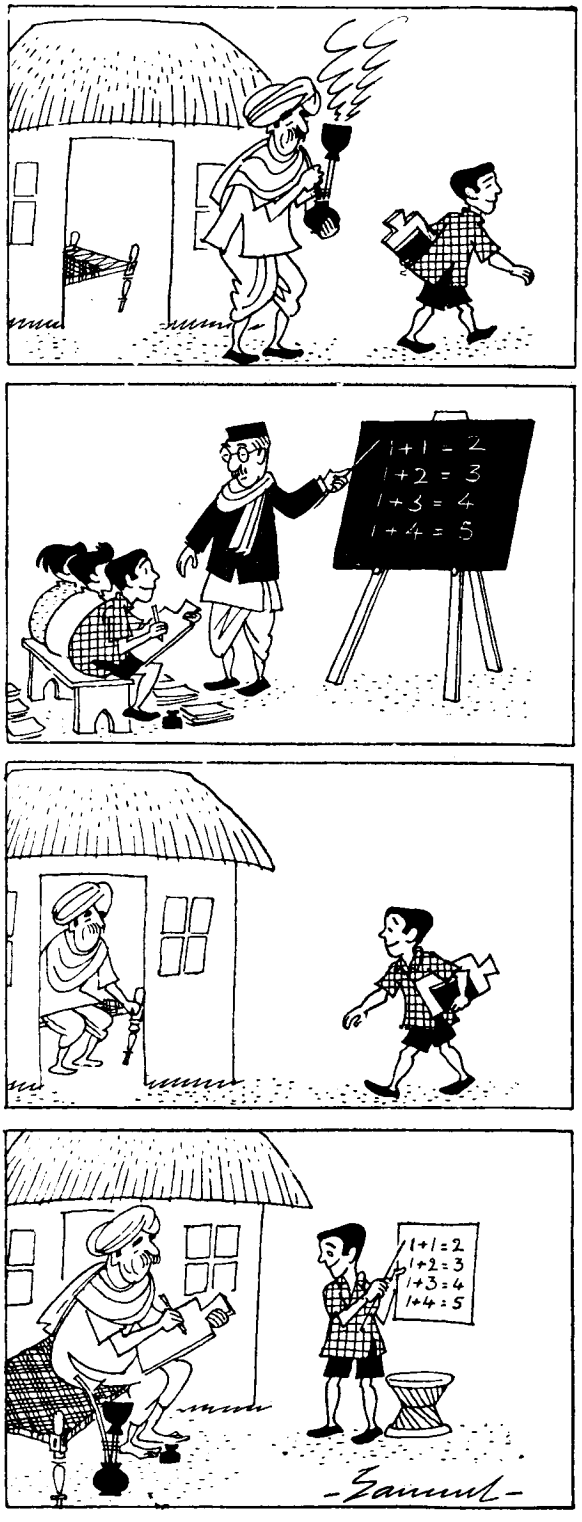

हमने कितनी सफलता प्राप्त की

रघुवीर सहाय

पहली पंचवर्षीय योजना पूरी होने को है। इस योजना का एक महत्वपूर्ण अंग था भारत के गाँवों की रूपरेखा बदलने के लिए धीरे-धीरे भारत के गाँवों में सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रसार करना।

७ मई, १९५२ को सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सम्बन्ध में होनेवाले विकास आयुक्तों के सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए प्रधान मंत्री ने कहा था—"मैं सामुदायिक विकास कार्यक्रम को इसलिए महत्वपूर्ण नहीं समझता क्योंकि इसके अन्तर्गत होनेवाले काम की हम एक सूची तैयार कर सकते हैं। मैं आशा करता हूँ कि यह सूची काफ़ी लम्बी-चौड़ी और अच्छी होगी। अन्न की उपज में वृद्धि, नए मकान, स्कूल, चिकित्सालय, बेहतर सड़कें, तालाब और कुएँ—इन सब की एक सूची तैयार की जा सकती है, जिसको देखकर दिल खुश होता है। लेकिन मेरा दिमाग़ इस सूची पर न जाकर इसके पीछे जो बच्चे, बूढ़े और स्त्रियाँ हैं, उनकी तरफ़ जाता है। मकान भले ही अच्छा हो, लेकिन कद्र का हकदार न मकान है, न मकान में रहनेवाला—असली कद्र मकान बनानेवाले की होनी चाहिए। इसलिए मेरा ख्याल निर्माता की तरफ़ जाता है और मैं सारे हिन्दुस्तानियों को निर्माता बनाना चाहता हूँ। सामुदायिक विकास-योजना को मैं महज़ इसलिए महत्व नहीं देता कि इससे देश में बहुत कुछ भौतिक परिवर्तन होगा, बल्कि इससे बढ़ कर इसलिए कि इस योजना का उद्देश्य समाज और व्यक्ति का निर्माण करना है, खुद व्यक्ति को अपने गाँव का और इस तरह हिन्दुस्तान का निर्माता बनाना है।"

इस समय यह अनुमान लगाना कि हमने इन ३½ वर्षों में इस दशा में कितनी प्रगति की है, कहाँ तक हम नेहरू जी के आदर्श की प्राप्ति में सफल हुए हैं, उपयुक्त ही होगा।

सफलताओं के बारे में तो अब तक भारतीय और विदेशी प्रेक्षक बहुत-कुछ लिख चुके हैं; सरकारी विशेषज्ञों की अनेक रिपोर्टें भी इस पर प्रकाश डालती हैं। इनमें बहुत से विशेषज्ञ ऐसे भी हैं जिन से हम असहमत होंगे। इस चीज़ का अनुमान लगाते समय सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हम 'मनुष्य' के निर्माण में कहाँ तक सफल हुए हैं। मनुष्य से तात्पर्य उस सामान्य ग्रामवासी से है जिससे सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम के अन्तर्गत हमारा वास्ता पड़ता है। कहाँ तक हम उसे प्रगति के पथ पर लाने में सफल हुए हैं? भौतिक सफलताओं को छोड़िए, कहीं वे अधिक होंगी और कहीं कम, वास्तविक प्रश्न यह है कि क्या लोगों में स्वयं अपनी दशा सुधारने की भावना जाग्रत हो चुकी है? क्या वे अपने रहन-सहन का ढंग बदलने को आतुर हैं? क्या वे ग्राम विकास कार्यक्रम में स्वयं और समझदारी से सहयोग देते हैं?

मुझे इस सम्बन्ध में अनेक आशंकाएँ हैं और मैं समझता हूँ कि हमने जो कुछ किया है उसमें से अधिकतर सरकारी अथवा गैर-सरकारी दबाव के फलस्वरूप हुआ है; सम्बन्धित लोगों में स्वयं कुछ करने की इच्छा का अभाव था। अगर ऐसी बात न होती तो ग्राम पंचायतों को ग्राम विकास में भाग लेना चाहिए था; योजना सलाहकार समितियाँ और ज़िला योजना समितियाँ इस कार्य के प्रति उदासीन न होतीं। सरकारी रिपोर्टों में भी यह बात स्वीकार की गई है कि इन संस्थाओं ने विकास कार्य में सही अर्थों में भाग नहीं लिया। योजना क्षेत्र की भलाई सोचने की बजाए वे जातीय भेदभाव के चक्कर में पड़ी रहती हैं। ऐसी दशा में हम क्या करें? प्रश्न यह है कि आखिर दोष किस का है? क्यों हमें आशातीत सफलता नहीं मिली? अपनी नीति में क्या सुधार किया जाए जिससे हमें अधिक से अधिक सफलता मिल सके?

मैं समझता हूँ कि सबसे अधिक दोष है उन अनुपयुक्त कार्यकर्ताओं का, जो विकास कार्य के सर्वेसर्वा हैं! बुरे औज़ारों से कोई अच्छी चीज़ नहीं बन सकती। अपने उद्घाटन भाषण में स्वयं प्रधान मंत्री ने कहा था—"आप मेरी विचारधारा से सहमत हों या नहीं, मेरे सामने यह बात साफ़ है कि अगर हमें देश के निर्माण के इस महान् कार्य को शुरू करना है तो किताबें और आँकड़े, कागज़-पत्र और निर्देश, योजना और संगठन, यही हमारे लिए काफ़ी नहीं होंगे। उसके लिए ज़रूरत है जोश और उत्साह की, उस भावना की जो किसी राष्ट्र को ऊँचे लक्ष्यों की तरफ़ ले जाती है।"

प्रश्न यह है कि वह जोश कहाँ है, वह भावना कहाँ है जो किसी राष्ट्र को उत्थान की ओर ले जाती है? मुझे क्षमा करें—वह भावना और वह जोश तो हैं ही नहीं। ज़िलों में जो अफ़सर विकास कार्य के अध्यक्ष हैं, वे पंचवर्षीय योजना के 'क'

[शेष पृष्ठ २४ पर]

काश्तकारी सुधार की आवश्यकता क्यों ?

हर्षदेव मालवीय

भारत के भूमि सुधार कार्यक्रम के पीछे क्या प्रेरणा है ? जब सारा देश स्वातन्त्र्य संग्राम में जुटा हुआ था उन्हीं दिनों राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी ने कहा था कि 'राजनीतिक स्वतन्त्रता हम इसलिए चाहते हैं कि हम अपने देश में आर्थिक स्वतन्त्रता की स्थापना करें।' और चूँकि हमारे अपार देशवासी ग्रामों में निवास करते हैं, अतः आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए पहला क़दम वहीं उठाना ज़रूरी हो गया। ग्रामों का किसान शोषित और दलित था और भूमि सुधार उसी को उबारने के लिए ज़रूरी थे। अतः देश के पुनर्निर्माण के लिए जिस प्रकार भूमि सुधार पहला कदम हुआ, उसी प्रकार भूमि सुधार कार्यक्रम में पहला कदम हुआ मध्यस्थ प्रथाओं का उन्मूलन। इस कार्य को पूरा करने से ज़मींदारी प्रथा रूपी वह बड़ा रोड़ा हमारे मार्ग से हट गया जो सब प्रकार की तरक्की को रोके हुए था।

पर रास्ते में खड़े रोड़े को हटाना तो पहला ही काम है। उतना ही काफ़ी नहीं है। वह तो और कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए मार्ग भर खोल देता है ! पर असली काम तो किसानों की गरीबी को दूर करना है। काफ़ी अरसे पहले एक किसान ने अपनी ही वाणी में अपने दुख-दर्द को इस प्रकार व्यक्त किया था—

नीमक घटि गै, कुरता फटि गै, धोतिया भईल पुरान,
चुलिया में लकड़ी घटि गै, भूखा रहले प्रान ॥
छटपटि करि कै बेटवा छटकै, भूख से नीपट नादान,
हाथ माथ धरि मेहरि रोवै, दया करो भगवान ॥
गमछी पहिन कै दिन कटवली, सहती सब अपमान,
नंगे बिटिया बेटवा रहली, मेहरि फटल पुरान ॥

तो समस्या है उस काश्तकार को उबारने की जिसके पास नमक नहीं, लकड़ी नहीं, जिसके लड़के भूख से छटपटाते हैं, जिसकी स्त्री माथे पर हाथ धर कर रोती है, जिसका कुर्ता और धोती फट गई है और गमछा पहन कर जो दिन काटता है, जिसके बच्चे नंगे घूमते हैं और जिसकी स्त्री भी फटा-पुराना पहनती है। ज़मींदारी प्रथा का उन्मूलन तो इस काश्तकार के केवल एक बोझ को खत्म करता है। पर उसके अनेक और बोझ हैं और काश्तकारी सुधार द्वारा आज हमारी राज्य सरकारें इन बोझों को हटाने का काम कर रही हैं।

काश्तकारी सुधार के वर्तमान देशव्यापी कार्यक्रम को समझने के पूर्व एक बात और ध्यान में रखना अच्छा होगा। अंग्रेज़ी राज्यकाल में भी विदेशी शासकों ने कई प्रान्तों में काश्तकारी सुधार करने का प्रयास किया था। उनके ऐसा करने का कारण था। भारत पर उन्होंने अपना आधिपत्य जमाया था, यहाँ से अपने उद्योगों के लिए कच्चा माल ले जाने और यहाँ के बाज़ारों में अपना पक्का माल बेचने के लिए। पर माल तो तब ही बिक सकता है जब खरीदनेवालों के पास पैसा हो। वरना माल बाज़ार में बिना बिके पड़ा रहता है। और विदेशी शासकों ने यह समझ लिया कि जिन ज़मींदारों को उन्होंने ही खड़ा किया, उनके ही कारनामों की वजह से किसान को अपनी भूमि पर कोई सुरक्षा प्राप्त नहीं है, ज़मींदार कभी भी उसे बेदखल कर सकता है, और ऐसा निराश और हताश किसान भला क्यों मन लगा कर खेती करता। वस्तुतः भारतीय कृषक ने समझ लिया कि वह भूखा रहने के लिए ही पैदा हुआ है, जो कुछ वह पैदा करेगा, ज़मींदार छीन लेगा। अतः उसने कृषि उत्पादन का काम बेगार के तौर पर करना शुरू कर दिया। अंग्रेज़ शासकों ने अपने काश्तकारी कानूनों द्वारा कृषकों को कुछ सुरक्षा प्रदान करने का प्रयास किया पर उनकी वह कोशिश बेकार ही सिद्ध हुई। ऐसा होना अनिवार्य था। किसान को सुरक्षा प्रदान करने के किसी भी कदम का श्री-गणेश उनके शोषक मध्यस्थों के उन्मूलन से होना चाहिए। पर ऐसा करना ज़मींदारों को पैदा करने वाले अंग्रेज़ों के बूते की बात न थी।

इस कारण ही स्वतन्त्र भारत के भूमि सुधार कार्यक्रम में मध्यस्थों के उन्मूलन को प्राथमिकता देकर काश्तकारी सुधार का क़दम उठाया गया। इस सुधार की पहली बात तो यह है कि जो काश्तकार जिस ज़मीन को जोतता-बोता हो उस पर काबिज़ रहने का उसको अधिकार दिया जाए। जब किसान को विश्वास हो जाएगा कि जिस ज़मीन को वह जोत रहा है, वह उसी के पास रहेगी, कोई उसे छीन नहीं लेगा, तभी वह उसकी तरक्की के लिए तन, मन, धन से काम करेगा। तभी वह पैसा खर्च कर खाद डालेगा, तब ही वह कुएँ बनवाएगा और सिंचाई का दूसरा प्रबन्ध करेगा, अच्छे बीज का इस्तेमाल करेगा, वगैरह।

यह तो काश्तकारी सुधार की हुई पहली बात। पर यहीं आप एक सवाल उठा सकते हैं। कहा जा सकता है कि जब मध्यस्थ

नहीं रह जाते तो फिर यह काश्तकारों का सिलसिला ही न रह जाएगा, सभी ज़मीन के मालिक हो जाएँगे। यह शंका इस अर्थ में सही है कि हम अन्ततोगत्वा ऐसा ही सिलसिला चाहते हैं, जिसमें जो ज़मीन पर हल चलाए वही उसका स्वामी हो। **'कृषाणः पृथ्वीपतिः'**—किसान ही पृथ्वी का मालिक है—यह आदर्श हमारे सामने पुराने ज़माने से है। पर अभी मध्यस्थ प्रथाओं के टूटने के तुरन्त बाद, इस क्रम को स्थापित कर देना सम्भव नहीं है। जैसा सिलसिला भूमि जोतने का हमारे देश में था, उसके अन्तर्गत ज़मींदार कभी-कभी तो अपनी कुछ भूमि पर खेती करता था, पर अधिकतर वह उसे लगान पर उठाता था। और जो लोग ज़मींदार से ज़मीन लेते थे, वे भी प्रायः अपने खेत अधिया पर, या किसी और क्रमानुसार दूसरों को उठा देते थे। मध्यस्थ प्रथाओं के खत्म होने के बाद भी भूमि को इस प्रकार उठाने का सिलसिला तो है ही। और इन्हीं क्रमों में शोषण की सम्भावनाओं को खत्म करने के लिए और हर एक के साथ न्यायोचित व्यवहार करने के लिए ही काश्तकारी सुधार की ज़रूरत है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में काश्तकारों की स्थिति सुदृढ़ करने के लिए निम्न सुझाव रखे गए —

(१) भूमि के वर्तमान काश्तकारों को भूमि पर काबिज रहने दिया जाए, उनको मौरूसी हक मिलें। हाँ, यदि उन्मूलित मध्यस्थ खुद खेती करना चाहे तो उसे एक सीमा तक भूमि को अपनी जोत में लाने का अधिकार दिया जाए।

(२) उन्मूलित व्यक्तियों या अन्य भूस्वामियों को कहा जाए कि वे अपनी भूमि का जो हिस्सा स्वयं जोतना चाहते हैं, उस पर वे पाँच वर्ष की अवधि के अन्दर खेती शुरू कर दें। परन्तु यह अधिकार उन्हीं को दिया जाए जो पहले भी कुछ खेती-बाड़ी करते रहे हों।

(३) भूस्वामियों द्वारा इस प्रकार भूमि लेने के बाद जो भूमि काश्तकारों के पास रहती हो, उसे उन्हें खरीदने का पूर्ण अधिकार हो। मूल्य-निर्धारण काश्तकार द्वारा दिए जानेवाले लगान के एक गुणांक के रूप में हो और काश्तकार को यह अधिकार रहे कि वह इस रकम को सरल किश्तों में कुछ वर्षों में अदा कर सके।

(४) भविष्य में काश्त पर भूमि देने का अधिकार कुछ विशेष परिस्थितियों ही में दिया जाए। और यदि काश्तकार को भूमि जोतने के लिए दी भी जावे तो वह कम से कम पाँच साल से लेकर दस साल तक के लिए हो। साथ ही काश्तकार को यह सुविधा रहे कि यदि इस अरसे के बाद भी वह ज़मीन जोतते रहना चाहे तो ऐसा कर सके।

काश्त पर उठाने का विशेष कारण क्या हो सकता है, यह भी स्पष्ट कर दिया जाए। विधवाओं को, अपाहिजों को, नाबालिगों को, ऐसे लोगों को जिनकी दिमागी हालत ठीक नहीं है, भूमि स्वयं न जोत कर दूसरों से जोतवाने का हक होना सामाजिक न्याय की दृष्टि से आवश्यक है। फिर जो व्यक्ति देश की जल, थल या वायु सेना में देशहित का काम करते हैं, उनको भी यह अधिकार होना चाहिए कि वे अपनी भूमि काश्त पर उठा सकें।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत के भूमि सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत काश्तकारी सुधार का आधार यही है कि जिसका हल, उसकी भूमि। उपर्युक्त कार्यक्रम को पूरा करने में अलग-अलग प्रदेशों की प्रगति समान नहीं है। उत्तर प्रदेश व बम्बई राज्य तो काश्तकारों को सुरक्षा प्रदान करने में बहुत आगे बढ़ चुके हैं। हैदराबाद राज्य में भी एक प्रभावशाली कानून लागू हो चुका है। पर कुछ राज्य काफ़ी पीछे हैं। मद्रास राज्य ने गत दिसम्बर मास में एक विधेयक का मसौदा प्रकाशित किया है। राजस्थान और मध्य प्रदेश की सरकारें इस काम के लिए नियुक्त समितियों के प्रतिवेदनों पर विचार कर रही हैं। आन्ध्र में अभी एक समिति इस समस्या पर विचार कर रही है। पंजाब में कुछ प्रभावशाली कदम उठाए जा चुके हैं, पर अभी बहुत कुछ करना शेष है।

योजना कमीशन ने इसे स्वीकार किया है कि काश्तकारी सुधार की दिशा में राज्यों में जो कुछ हुआ वह नाकाफ़ी है। दूसरी योजना में भूमि सुधार कार्यक्रम बनाने के लिए सुधार पैनल नियुक्त हुआ है, जो शीघ्र ही अपना प्रतिवेदन देनेवाला है। वैसे राष्ट्रीय विकास परिषद् ने एक दूरगामी कार्यक्रम को चलाने पर ज़ोर दिया है।

हमारे इस कार्यक्रम का उद्देश्य अपनी भारतीय वसुन्धरा के ग्रामों में निवास करनेवाले कृषक को सुख और समृद्धि प्रदान करना है। जब वह सुखी और समृद्ध होगा, तभी भारत सुखी और समृद्ध हो सकता है।

★

कहानी

प्रकाश और विश्वास

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

मारियप्पै आसारी एम० एल० ए० के निरन्तर प्रयासों के फलस्वरूप ग्राम कालप्पै नायकन पट्टी में काफ़ी उत्साह नज़र आता था। यह गाँव राष्ट्रीय विस्तार सेवा का अंग बना लिया गया था। नए साल के दिन कार्यक्रम का उद्घाटन करने के लिए ज़िला कलक्टर महोदय आए हुए थे। इस अभूतपूर्व अवसर की तैयारी में गाँववालों ने स्कूल के भवन पर सफेदी कर दी थी और वर्षों से जीर्ण-शीर्ण पड़े काली के मन्दिर की मरम्मत करके उसकी छत पर नए खपरैल डाल दिए थे। गाँव के तालाब को भी साफ़ कर दिया गया था। पटवारी महोदय धोबी की झोंपड़ी में जल्दी-जल्दी घुसते दिखाई पड़े और जब बाहर निकले तो साफ़-सुथरे कपड़ों में थे और सिर पर शानदार पगड़ी बँधी थी। गाँव के स्त्री, पुरुष और बच्चे सभी खुश दिखाई पड़ रहे थे।

उद्घाटन समारोह समाप्त हो गया। एक ग्राम विकास समिति की स्थापना की गई जिसके प्रधान आसारी बनाए गए।

गाँव में बिजली भी आ गई। प्रगति का यह पहला चिन्ह था। गलियों के लिए चार बत्तियाँ मंज़ूर हुईं। यह बत्तियाँ कहाँ-कहाँ लगाई जाएँ, इसका निर्णय करने के लिए कलक्टर की देख-रेख में ग्राम विकास समिति की बैठक हुई। एकमत से फैसला हुआ कि एक बत्ती काली के मन्दिर के सामने, एक तालाब के पास, एक हरिजन बस्ती में और एक आसारी के मकान के सामने लगाई जाए। इस पर आसारी महोदय बोले—"मुझे बिजली नहीं चाहिए। इस स्थान की बजाय मुदालियार गली में बिजली लगा दी जाए।"

डिप्टी कलक्टर एकदम गद्गद होकर बोला—"यह है सच्ची संस्कृति।"

बिजली से गाँव जगमगा उठा। दिन में भले ही कहीं कूड़ा नज़र आ जाए और कोई कोना साफ़-सुथरा न दिखाई पड़े, लेकिन रात को बिजली की रोशनी में सारा गाँव जगमगा उठता था। बच्चे रात हो जाने पर भी काफ़ी देर तक खेलते रहते थे। कालप्पै नायकन पट्टी के लोग अपने गाँव पर गर्व किया करते थे। सच तो यह है कि यह गाँव सारे ताल्लुक़े के गाँवों के लिए ईर्ष्या का कारण बन गया था।

हर गाँववाले यही पूछते—"हमारी बारी कब आएगी?"

पेरिया दासन पट्टी गाँव के लोग तो यह प्रश्न खास तौर से पूछा करते थे। आसारी अनिश्चित-सा आश्वासन दे देते, परन्तु वे लोग इससे सन्तुष्ट न होते।

वे कहते—"कालप्पै नायकन पट्टी तो तुम्हारे सुसर का गाँव है, तभी तो वहाँ बिजली पहले आई है।" आसारी उत्तर देते—"नहीं, ऐसी बात नहीं है। हमारे गाँव ने निर्धारित रकम अदा करके ही बिजली प्राप्त की है। तुम भी इकट्ठी कर लो, तो तुम्हारे गाँव में भी बिजली लग सकती है।"

पेरिया दासन पट्टी के कुमार गाऊंडर ने उत्तर दिया—"हम आसारी के हथकंडों से भली भाँति परिचित हैं।"

पेरिया दासन पट्टी में कुमार गाऊंडर की भूमि से लगती हुई आसारी की भी भूमि थी जिसकी सिंचाई उसी तालाब से होती थी जिससे गाऊंडर की भूमि की होती थी। तालाब में तीन साल में एक बार पानी आता था। इसलिए आसारी के खेत वाला कुआँ ही सिंचाई का एक मात्र विश्वासनीय साधन था। कुमार गाऊंडर के खेत में ऐसा कोई कुआँ नहीं था। जब तालाब में पानी नहीं होता था तो कुमार गाऊंडर को ऐसी फ़सलें बोनी पड़ती थीं जिनमें अधिक पानी की आवश्यकता नहीं पड़ती। आसारी की भूमि की खेती करने वाला काश्तकार सामी गाऊंडर बहुत ही परिश्रमी था। इसी कारण उसकी भूमि से उपज भी बहुत होती थी।

एक दिन सामी गाऊंडर ने देखा कि किसी ने कुएँ से पानी खींचने का सामान चुरा लिया है। उसने चोरी की सूचना अपने मालिक को दी और कहा—"हो न हो, यह काम कुमार गाऊंडर के चमार काश्तकार का है। हरेक व्यक्ति यह जानता है। सामान में से लकड़ी निकाल ली गई है और कुमार गाऊंडर के घर जलाने के काम में आ रही है।"

आसारी की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। अगर सामी की सूचना ठीक भी हो, तो भी पुलिस उसकी छान-बीन करने से रही। वह सीधा कुमार गाऊंडर के पास गया और बोला—"सामी एक दरिद्र व्यक्ति है, उसके साथ इतनी ज़्यादती करना ठीक नहीं।"

कुमार गाऊंडर इस पर क्रोध दिखाते हुए बोला—"किसने कहा है कि मेरे

चक्कीली* ने तुम्हारा कबाड़ चुराया है। यह·····झ·····झूठ है।"

आसारी ने कहा—"अगर चक्कीली मन्दिर में चलकर कसम खा ले कि यह काम उसने नहीं किया तो मैं विश्वास कर लूँगा।"

"ठीक है", कुमार गाऊंडर ने कहा।

कालप्पै नायकन पट्टी स्थित काली देवी का मन्दिर इलाके भर में प्रसिद्ध था। मन्दिर में शपथ ग्रहण करवा के सारे पंचायती झगड़े तय किए जाते थे।

आषाढ़ मास की पूर्णिमा का दिन था। चक्कीली मन्दिर में शपथ लेकर अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिए आया था। दोनों गाँवों के किसान वहाँ एकत्रित थे। पुजारी देवी की चरण-रज लाया और उसने चक्कीली के हाथ में दी। उसने धूलि लेकर अपने माथे पर अच्छी तरह मल ली और धीरे-धीरे कहना शुरू किया—"यह चोरी···" इसके आगे वह कुछ भी न कह सका और एकदम उछल कर तीर की तरह भाग निकला। भीड़ ने उसका पीछा किया परन्तु कोई उसे पकड़ न सका।

कुछ गाँववालों ने कहा—"वह शायद कैंडी गया है। पिछले एक महीने से वह रोज़ अपनी पत्नी से कैंडी जाने को कहा करता था।"

"यह सब आसारी की चाल है", कुमारा गाऊंडर बड़बड़ाया। लेकिन इस घटना के फलस्वरूप कुमार गाऊंडर के समर्थकों की संख्या बहुत घट गई और आसारी का सम्मान बढ़ गया।

वर्ष बीतते-बीतते कालप्पै नायकन पट्टी में और भी अनेक सुधार हुए। काली के मन्दिर में दो खिड़कियाँ और एक बिजली की बत्ती लगवाने का फैसला किया गया था। आसारी ने जो भी सुझाव रखे, डिप्टी कलक्टर ने मान लिए। आसारी का नाम सारे क्षेत्र में एक मन्त्र-सा बन गया, जिसका अर्थ था 'समृद्धि'।

आसारी की दादी उसी के साथ रहती थी। अचानक एक दिन उसके सिर पर कोई भूत-प्रेत आ गया। अपने बालों को बिखेर कर वह अनाप-शनाप बकने लगी। उसके अनर्गल प्रलाप का कुछ यही अर्थ निकलता था कि आसारी को यह सब काम छोड़ देने चाहिएँ। मन्दिर की देवी, बिजली तथा मन्दिर में किए गए अन्य सुधारों को पसन्द नहीं करती। ऐसा लगता था मानो मन्दिर की देवी ही उसके सिर पर बोल रही हो।

बड़ी कठिनाई से आसारी अपनी दादी को शान्त कर सका। लेकिन इससे उसने सुधार की योजना में कोई फ़र्क न पड़ने दिया। मन्दिर में खिड़कियाँ लगीं और बिजली भी लग गई। मन्दिर के पुनर्निर्माण के उपलक्ष्य में एक बड़े समारोह का आयोजन किया गया था।

अगले दिन प्रातःकाल गाँव भर में शोर मचा हुआ था।

"अजीब घटना घटी है। हमें दादी की बातों पर ध्यान देना चाहिए था—" सारे गाँव की ज़बान पर यही बात थी। पिछली रात समारोह के पश्चात् एक चोर मन्दिर में घुस आया और देवी के सब आभूषण चुरा कर ले गया। पुलिस ने जाँच-पड़ताल की और कुछ घरों की तलाशी भी ली, परन्तु कोई परिणाम न निकला।

गाँव में जितने मुँह उतनी ही बातें हो रही थीं।

"बिजली के कारण मन्दिर में भीड़ तो बढ़ गई परन्तु देवी के वास्तविक पुजारियों की संख्या घट गई, वरना काली के मन्दिर में घुस कर ऐसा दुष्कर्म करने का साहस कौन करता।"

प्रकाश आया तो विश्वास न रहा। मन्दिर की पुरातन ख्याति समाप्त हो गई।

कुछ योजनाओं का ऐसा ही अन्त होता है!

*चक्कीली—तमिल में चमार को कहते हैं।

पूर्वी क्षेत्र की सिंचाई के लिए बनाया गया 'तरंगण वीयर'

जहाँ ज़मीन आसमान बदल रहे हैं

कोशल्या देवी

राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी की जन्म-तिथि २ अक्तूबर को इस केन्द्र का उद्घाटन बिहार के मुख्य मंत्री डा० श्री कृष्णसिंह ने बापू के पावन मितिहरवा आश्रम में किया। मितिहरवा आश्रम इस क्षेत्र के ग्रामीणों के लिए प्रकाश स्तम्भ है। महात्मा गान्धी ने स्वराज्य आन्दोलन का जो बीज चम्पारण में बोया था, इस आश्रम ने उस बीज को पनपने के लिए मिट्टी दी। यहाँ की जनता निलहे गोरों को बर्षों से रो-रोकर और कभी-कभी झगड़-झगड़ कर अपनी तकलीफ़ें जताना चाहती थी। सब कुछ करके

एक किसान गर्व से अपने खेत की मूली दिखा रहा है

थक जाने पर यहाँ की जनता ने महात्मा गान्धी को निमंत्रित किया था। २ अक्तूबर, सन् १९५३ को बापू के आश्रम में बिहार के मुख्य मंत्री डा० श्रीकृष्ण सिंह ने उद्घाटन करते हुए कहा कि यह विकास-योजना आपको सुखी बनाएगी और इस प्रकार इस विकास-योजना से यहाँ के निवासियों के सुख-शान्ति में वृद्धि होगी।

इस क्षेत्र की आबादी में लगभग ६० प्रतिशत 'थारू' किसान हैं। यह जाति अपने को राजस्थान के थार इलाके से मुस्लिम काल में इधर भाग कर आया हुआ बतलाती है। एक स्थानीय लोक-गीत की इन दो पंक्तियों से इस बात की आंशिक पुष्टि होती है—

झिलमिल पात पतरिया है कटहर पात दुलारे।
पिया मोरे बाड़े हो रतन सिंह हो लड़त मुगल से॥

इन लोगों में से अधिकांश के पास जोतने बोने के लिए अपनी ज़मीन नहीं है। दिन रात खेतों में कठिन मेहनत के बावजूद भी इन्हें दो जून केवल भात खाने को मिलता है। यदि इनमें एक बार अच्छी ज़िन्दगी बसर करने की ललक पैदा कर दी जाए तो फिर ये लोग स्वयं ही उन्नति और समृद्धि के रास्ते पर चार कदम आगे दिखाई देंगे।

नेपाल की तराई में बसे होने के कारण यह क्षेत्र अति वृष्टि का क्षेत्र है। जंगल का रहना स्वाभाविक है। यह छोटा-सा इलाका पहाड़ी नदियों से भरा है। ये पहाड़ी नदियाँ ग्रामीणों को चैन से नहीं रहने देतीं। इन नदियों के बहाव को रोका नहीं जा सकता है, नियंत्रित किया जा सकता है। हमारी विकास-योजना ने इस ओर ध्यान दिया और इन नदियों को जीवनदायिनी रूप देने में कोई कसर नहीं उठा रखी। आज तीन सालों के भीतर ही किसान उन भयावही नदियों को आशा की दृष्टि से देख रहे हैं। आज यहाँ के निवासी प्रचण्ड पंडई नदी की अथाह शक्ति का सदुपयोग कर रहे हैं।

गत वर्ष तक यह क्षेत्र एक ही फ़सल उपजानेवाला क्षेत्र था। इस वर्ष इस क्षेत्र में दो और कहीं-कहीं तीन फ़सलें उपजाई गई हैं। धान के बाद आलू तथा गेहूँ और मकई या प्याज़ की फ़सल में परिवर्तित खेत पर्याप्त मात्रा में दिखाई देने लगे हैं। २२८ टन रासायनिक खाद तथा १८,५७५ टन कम्पोस्ट खाद खेतों में डाली गई। १६२ एकड़ में साग-सब्ज़ी की खेती की गई। इतने बड़े पैमाने पर साग-सब्ज़ी की खेती पहले कभी नहीं की गई थी। ३१३ एकड़ भूमि में जापानी तरीके से धान की खेती की गई। स्वयं मेरा परिवार चार महीने से साग-सब्ज़ी में स्वावलम्बी हो गया है।

ग्राम सफ़ाई और जन स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया गया। रोग-मुक्त करके जनता को स्वस्थ बनाने के लिए स्वास्थ्याधिकारी आवश्यक कार्य कर रहे हैं। सुनती हूँ कि कुछ विदेशों की नगर-पालिकाएँ जनता की सेवा माँ की गोद से कब्र तक करती हैं। हमारी विकास-योजना में भी गर्भवती स्त्रियों की देख-भाल का विशेष प्रबन्ध है। ८० प्रतिशत लोग मलेरिया से पीड़ित रहते थे, अब इनकी संख्या में काफ़ी कमी हो गई है। ६० प्रतिशत लोगों को पिल्ही की बीमारी रहती थी जो इस वर्ष ४० प्रतिशत पर उतर आई है। इन सारी व्याधियों का मुकाबला १५ केन्द्रों, ४ मातृ सदनों तथा एक स्थायी अस्पताल से किया जा रहा है। केवल ग्राम सेवकों ने ८,५०१ रोगियों की चिकित्सा की है। स्वस्थ और साफ़ जल की यहाँ बड़ी कमी थी, जिसकी पूर्त्ति २३ नए कुओं के निर्माण, ४३ कुओं के जीर्णोद्धार, १० स्नानगृहों की स्थापना और एक स्नान घाट के निर्माण द्वारा की गई। केवल इसी साल गन्दे पानी के निकास के लिए १,१६६ फुट पक्की नाली बनाई गई है।

सहकारिता के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिली है। जहाँ तक सहकारिता का प्रश्न है, योजना कमीशन ने सिफारिश की है कि देश के आर्थिक ढाँचे में सहकारी समितियों को प्रोत्साहन दिया जावे। योजना कमीशन ने आगे लिखा है कि सहकारिता आन्दोलन की प्रगति की सारी ज़िम्मेदारी सहकारी विभागों पर ही नहीं है, बल्कि सारी सरकारी मशीनरी को आपस में मिलकर काम करने की ज़रूरत है। हम लोगों के सामने इसके लिए लक्ष्य यही है कि सहकारिता को इतना बढ़ाना है कि प्रत्येक स्थल पर ठेकेदारों का स्थान सहकारी समितियाँ ले लें और इस प्रकार बीच में आकर लाभ कमानेवालों का समाज में कोई स्थान न रहे। ५८ बहुधन्धी सहकारी समितियाँ काम कर रही हैं। १६ ईख उत्पादक सहकारी समितियाँ हैं। ३ औद्योगिक सहकारी समितियाँ है। अब तक १६ सफल पंचायतों का संगठन किया जा चुका है।

योजना यह है कि पहले आवश्यकतानुसार कच्ची सड़कें व पुल बनाए जावें। इससे आवागमन के अलावा विचार-विनिमय में सुविधा होती है। यातायात के प्रबन्ध के अन्तर्गत ३ कार्य-

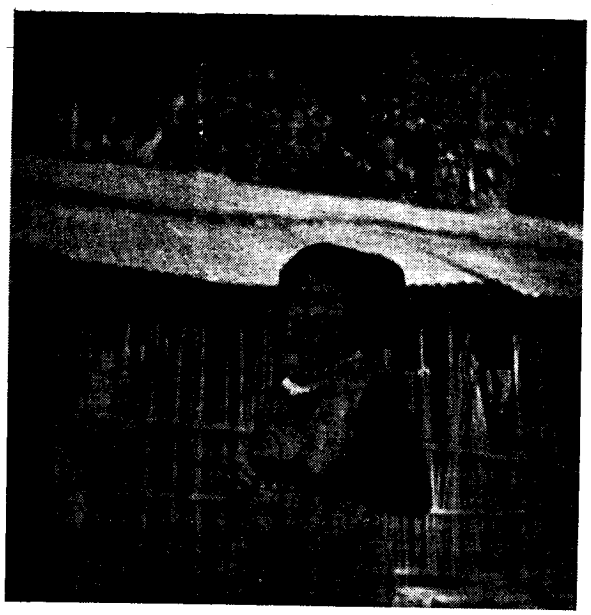

अपनी झोंपड़ी के बाहर एक थारू महिला

क्रम आते हैं—सड़कों की व्यवस्था, मोटर आदि से माल ढोने को प्रोत्साहन और पशुओं द्वारा वहन का विकास। इस दिशा में सवा सात मील सड़क का निर्माण, २३ मील सड़क का संस्कार, ५४ छोटे तथा ३ बड़े पुलों का निर्माण हो चुका है।

सिंचाई के लिए १२ बाँध और १६ पक्के कलवर्ट बन चुके हैं। लगभग ३,५६२ एकड़ भूमि की सिंचाई इससे हो रही है। 'तरंगण वीयर' का काम हाथ में लिया जा चुका है।

[शेष पृष्ठ ३० पर]

थारू महिलाएँ प्रचण्ड पंडई नदी पर बाँध बना रही हैं

भविष्य के बारे में कुछ विचार

एन० एम० लिंगम्

अब हम इस बात की आवश्यकता महसूस करने लगे हैं कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम की जाँच-पड़ताल करने और भविष्य में कार्यक्रम की अच्छी रूपरेखा तैयार करने के लिए एक विशेषज्ञों की समिति नियुक्त की जाए।

दूसरी मूल्यांकन रिपोर्ट इस बात पर प्रकाश डालती है कि हमने अब तक किस दिशा में कितनी सफलता प्राप्त की है और कहाँ हम असफल रहे हैं। रिपोर्ट में इस बात की चेतावनी भी दी गई है कि सफलताओं को आँके बिना कार्य का विस्तार करना उचित न होगा। रिपोर्ट में कहा गया है कि दस्तकारियों के विकास और सहकारी समितियों के विस्तार के लिए हमने अब तक कोई ख़ास प्रयत्न नहीं किया है। रिपोर्ट में स्थानीय निकायों और सलाहकार समितियों को मज़बूत बनाने पर ज़ोर दिया गया है। कार्यकर्त्ताओं को भर्ती करने के तरीकों में परिवर्त्तन करने और प्रशासनिक तालमेल बनाए रखने पर भी रिपोर्ट में काफी ज़ोर दिया गया है। लेकिन कोई भी ध्यान से पढ़ने वाला व्यक्ति, रिपोर्ट पढ़कर इस बात को अनुभव किए बिना नहीं रहेगा कि रिपोर्ट लिखनेवाले अब तक हुई प्रगति से नितान्त असन्तुष्ट हैं। इससे भी अधिक महत्व की बात यह है कि कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन ने अपनी रिपोर्ट में जो विचार व्यक्त किए हैं, ज़िम्मेदार गैर-सरकारी मत भी लगभग वैसा ही है।

इस कार्यक्रम में दो प्रकार की त्रुटियाँ हैं—संगठनात्मक और मनोवैज्ञानिक। भावनात्मक सतर्कता का अभाव केवल सामुदायिक विकास के क्षेत्र ही में नहीं है, सहकारिता और पंचायत आदि अन्य आन्दोलनों की तह में भी हमें इस चीज़ का अभाव मिलेगा। सच तो यह है कि हमारे सम्पूर्ण राष्ट्रीय प्रयासों में इस चीज़ का अभाव है। हमारे देश में अभी वह बात नहीं है, जो हम चीन के सम्बन्ध में सुन चुके हैं—जन-सामान्य में जोश और कार्य करते समय यह भावना कि हम कोई महान् कार्य कर रहे हैं। इस भावना की उपस्थिति में विकास के रास्ते में आनेवाली कठिनाइयाँ नगण्य हो जाती हैं। क्या शताब्दियों की गुलामी का प्रभाव अभी हम पर से हटा नहीं है? या देश में हुए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन इतने सशक्त नहीं हुए कि जन-सामान्य में कार्य करने की भावना जागृत कर सकें? क्या कारण है कि हमें चारों ओर सरकारी प्रयासों की आलोचना, उपेक्षा, उदासीनता या निराशा दिखाई पड़ती है और अगर कहीं सहयोग दिया भी जाता है तो वह भी अजीब-सा, बगैर सोचे-समझे। इन चीज़ों पर विचार करना इस लेख की सीमा से परे है। इसमें तो यह देखना है कि कार्यक्रम के संगठनात्मक परिवर्तनों से किस प्रकार जन-सामान्य की रुचि इस ओर आकर्षित की जा सकती है।

स्वतन्त्रता मिल जाने पर भी देश की प्रशासनिक व्यवस्था में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। देखा जाए तो नौकरशाही और केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति में स्वतन्त्रता के बाद वृद्धि ही हुई है। इसमें कोई हैरानी की बात नहीं कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम की नाज़ुक जड़ें आधुनिक व्यवस्था की मज़बूत चट्टानों को चीरने में असफल रही हैं। ज़िला प्रशासन को लीजिए—कलक्टर के सिर पर हर प्रकार का काम होता है। एक ओर तो ज़िला कलक्टरी का महत्व बढ़ता गया दूसरी ओर उस पद पर आसीन व्यक्तियों की योग्यता, अनुभव और कार्य-क्षमता में निरन्तर ह्रास होता रहा। फलस्वरूप एक सामान्य कलक्टर अपने विस्तृत और विभिन्न कर्त्तव्यों पर केवल रोज़मर्रा की बातों की तरह ही ध्यान दे पाता है। उसके पास तो हर मामले को लेकर मिलनेवाले लोगों से भेंट करने के लिए भी काफी समय नहीं होता। फिर उससे यह आशा कैसे की जा सकती है कि वह एक आन्दोलन को प्रोत्साहन दे, उसका नेतृत्व करे। वह किसी प्रकार का सृजनात्मक कार्य कैसे कर सकता है। सब से बढ़ कर बात तो यह है कि वह जनता तक कैसे पहुँच सकता है।

ज़िला प्रशासन व्यवस्था में हुए परिवर्तनों से जो लोग परिचित हैं, वे यह जानते हैं कि गैर-सरकारी लोग जन-सामान्य से दूर हुए जाते हैं और विकास कार्य से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। आधुनिक व्यवस्था में ज़िले की बागडोर कलक्टर के हाथ में है—कलक्टर के नीचे अनेक अफ़सर हैं। निरन्तर बढ़ते हुए कर्त्तव्यों को निबाहना ही उसके लिए कठिन हो रहा है, जन-सहयोग का वातावरण पैदा करने की कोशिश करना तो दूर की बात है। कलक्टर अब भी पुराने ढर्रे का गुलाम है। उस ढर्रे में पाल एच० एपलबी के अनुसार 'अपनी पदवी, वर्ग, उपाधि और सेवा के प्रति निरन्तर चेतना है, जनता की सेवा की चेतना बहुत कम है।"

ज़िला-स्तर पर काम करने वाले अन्य विभागीय अध्यक्षों—ज़िला कृषि अधिकारी, ज़िला स्वास्थ्य अधिकारी, ज़िला शिक्षा

अधिकारी, ज़िला इन्जीनियर आदि को ही लीजिए। ये अफ़सर ज़िले में किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं हैं। ये लोग राज्य-स्तर पर अपने-अपने विभाग के अध्यक्ष के नीचे हैं। जब तक व्यवस्था ऐसी ही रहेगी, यह आशा करना कि वे नए कार्यक्रम में पूरा-पूरा सहयोग देंगे, बिलकुल बेकार है।

विकास कार्य में स्थानीय निकायों के महत्व के बारे में योजना कमीशन और सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन बहुत कुछ कह चुके हैं। कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन के अनुसार तदर्थ सलाहकार समितियों और विकास मण्डलों की स्थापना करने की प्रणाली अधिक सफल नहीं रही। प्रश्न यह उठता है कि आज स्थानीय निकायों की अवस्था कैसी है? सबसे नीचे स्तर पर पंचायतें या तो कमज़ोर हैं या उनमें गुटबन्दी का बोलबाला है। ज़िला बोर्ड भी बड़ी तीव्र गति से शक्तिहीन होते जा रहे हैं—उनसे उनकी शक्ति और साधन छीने जा रहे हैं। हर राज्य में पिछले काफ़ी समय से उनमें सुधार करने की बातचीत ज़ोर-शोर से चल रही है और वह समय दूर नहीं जब उनका नाम ही राज्यों से मिट जाएगा।

सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रमों के अन्तर्गत कई मदें जैसे पानी की उपलब्धि, सड़कें, ग्राम-पाठशालाओं के लिए इमारतें, प्रसूतिका केन्द्र, नालियाँ बनाना, औषधि केन्द्र—स्थानीय निकायों के पास आ जाने पर पहले से कम खर्चा करके पूरी की जा सकती हैं। उनमें जो कुछ भी त्रुटियाँ हों, वे ही ऐसे परिनियत निकाय हैं जिनके कुछ निश्चित और अभिस्वीकृत कर्त्तव्य हैं और जनता को आवश्यक सुख-सुविधा पहुँचाने के लिए उनके अलग विभाग हैं। कितने दुख की बात है कि इन विभागों से लाभ न उठाकर हम विकास के लिए नई चीज़ों की तरफ दौड़ते हैं। परिणाम क्या निकलता है— बस फिज़ूलखर्ची।

आश्चर्य नहीं कि सामुदायिक विकास का नया संगठन आधुनिक प्रशासनिक व्यवस्था में अपना योग्य स्थान नहीं पा सका। इसलिए ऐसी अवस्था में यह आशा करना कि नया आन्दोलन देश में कोई क्रान्ति मचा दे, बिलकुल बेकार बात है।

लेकिन हम करें क्या? सरकार की सारी मशीनरी को, सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन जिसका एक छोटा-सा अंग है, नया रूप दिया जाए, ऐसा रूप जो गाँव के पुनर्निर्माण में सहायक हो सके। प्रशासकीय कर्त्तव्यों और शक्तियों का विकेन्द्रीकरण हो और हर सरकारी कर्मचारी में मनोवैज्ञानिक परिवर्तन लाया जाए। गैर-सरकारी व्यक्तियों और संस्थाओं से पूरा-पूरा फ़ायदा उठाया जाए। दूसरे शब्दों में हमें गैर-सरकारी लोगों में सरकारी और सरकारी अफ़सरों में गैर-सरकारी भावना पैदा करनी है। हमारा यह समझना ग़लत है कि ग्राम सेवक या सामुदायिक कार्यक्रम के लिए भर्ती होने वाले अन्य कर्मचारी, सबके सब कुछ करने की भावना लेकर काम में जुटेंगे। वे लोग भी तो आधुनिक व्यवस्था का एक अंग हैं। हम ग्राम सेवक को गाँव में शान्ति और समृद्धि का सन्देशवाहक कहते हैं। परन्तु क्या यह हमारा कर्तव्य नहीं कि हम हर सरकारी कर्मचारी को, चाहे वह तहसीलदार हो, स्कूल इन्सपेक्टर हो अथवा स्वास्थ्य सहायक हो, ग्राम सेवक बनाएँ।

इसी चीज़ को ध्यान में रखते हुए ही मैं सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम के देश भर में प्रसार के हक में हूँ। हालाँकि कार्यक्रम मूल्यांकन संस्था ने हमें ऐसा करने से पूर्व सोचने की चेतावनी दी है। ऐसे संगठन में वर्तमान खण्ड सलाहकार समितियों को परिनियत ज़िला विकास परिषद् बना देना होगा और ज़िला स्तर का हर विभागीय अध्यक्ष और विस्तार अधिकारी इस परिषद् के प्रति उत्तरदायी होगा।

इस परिषद् का अध्यक्ष एक गैर-सरकारी आदमी हो और कलक्टर इसका सदस्य हो। ज़िला बोर्ड खतम हो जाएगा परन्तु उसके स्थान पर ज़िले के क्षेत्र में ये प्रस्तावित शक्तिशाली परिषद् होंगे। वर्तमान सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा संगठन को प्रशासन-व्यवस्था में मिला दिया जाएगा।

सच है कि गल्तियाँ करके ही कुछ तरक्की की जाती है। तीन साल के इस कार्यक्रम के अनुभव, गोष्ठियों में विचारों के आदान-प्रदान और कार्यक्रम मूल्यांकन संस्था के अध्ययन के आधार पर हम अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कोई अच्छी रूपरेखा तैयार कर सकते हैं। पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत होने वाले औद्योगीकरण, राष्ट्रीय आय में वृद्धि, बेकारी में कमी, और जनता में शिक्षा और संस्कृति आदि के प्रसार के साथ-साथ सामुदायिक विकास के काम में भी प्रगति होगी। इनके फलस्वरूप सामुदायिक विकास कार्यक्रम अधिक गाँवों तक पहुँचने में सफल होगा।

★

रंगोत्सव

प्रयागनारायण त्रिपाठी

जिस क्षण सविता के हाथों से
छटक गिरी होगी यह धरती
अविच्छिन्न, आत्मा-सी प्रियतम,
बेबस, झरते अग्नि-फूल सी,

उस क्षण किसने सोचा होगा;
हम सब पृथ्वी-पुत्र, पुलक कर
बरस-बरस बोते जायेंगे
मां वसुन्धरा के अन्तर में

अनल-बीज, जो उग आयेंगे
फागुन की अरुणाभ सांझ में
अभिनव उत्सव के ऊर्ध्वोन्मुख
लक्ष-लक्ष पावक-प्रसून बन !

जिस क्षण सातो रंग समेटे
भेद असीम तमस्, महदन्तर,
भया होगा प्रथम किरण ने
निज आत्मजा धरा को फिर से,

उस क्षण किसने सोचा होगा :
गोपन सप्तादित्य-वर्ण वे
इतने अधिक हमारे होंगे
जिससे उनको घोल-घोल कर

हम, मनु-वंशज, छितरायेंगे
फागुन के स्वर्णाभ प्रात में
वासन्ती धरती के तन पर
रंगोत्सव के कोटि-कोटि कण !

जिस क्षण मृत उस क्रौञ्च-युग्म को
देख अचानक फूटी होगी
"मा निषाद्' की, कवि-करुणा की
प्रथम गिरा, नीरव वनांत में

उस क्षण किसने सोचा होगा :
हम सब जग जन, हम संसारी
रच देंगे वे गीत मनोहर
करुणा, प्यार, पुलक के अनगिन,

जो दिशि-दिशि में गूंज उठेंगे
छू लेंगे कण-कण के मन को
झांझ, मृदंग, वेणु, वीणा-स्वर
रंग, उमंग, संग के मधु स्वन !

★

मानसून के दिनों में मधुमक्खियों को कृत्रिम भोजन देना बहुत ज़रूरी है

हमारे ग्रामोद्योग

यह मशीन छत्ते से शहद की एक-एक बूँद निकाल लेती है

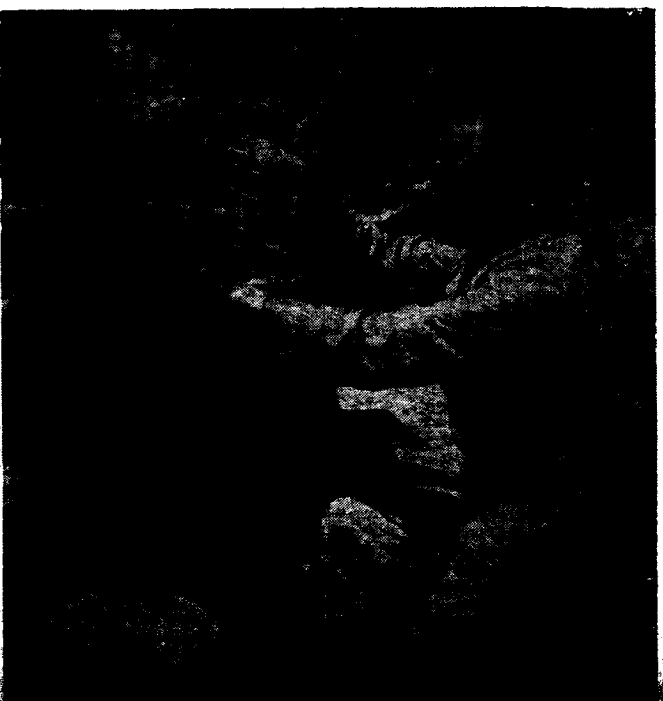

मधुमक्खियाँ पालने का पुराना तरीका

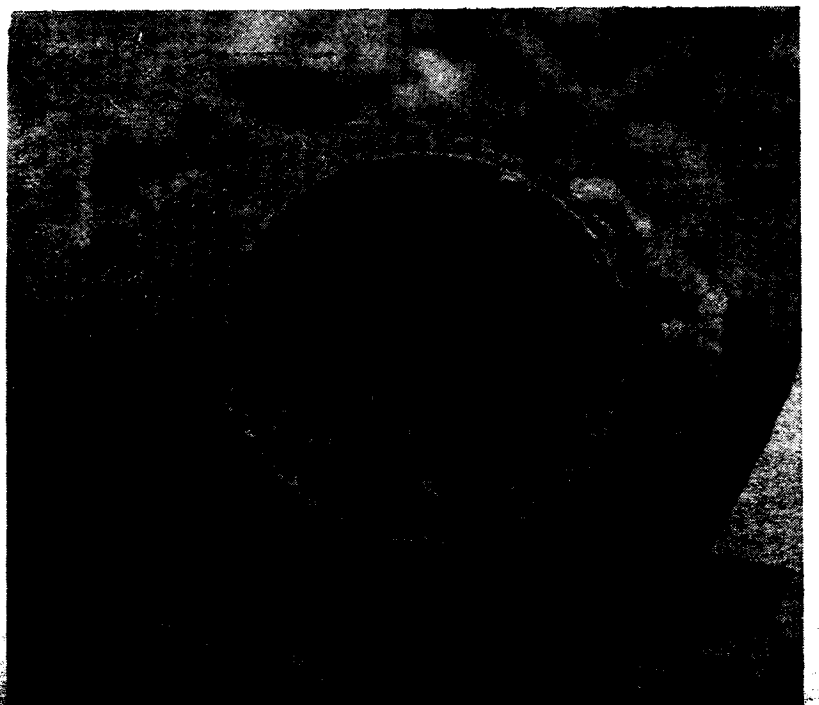

ऊपर : *अम्बर चर्खा जो हमारे हथकर्घा उद्योग में क्रान्ति उत्पन्न कर देगा। ऊपर दाईं ओर के चित्र में एक बड़ ड्रम पर सूत तना हुआ है*

उत्तर प्रदेश में क़ालीन बुनने की कला काफ़ी विकसित है

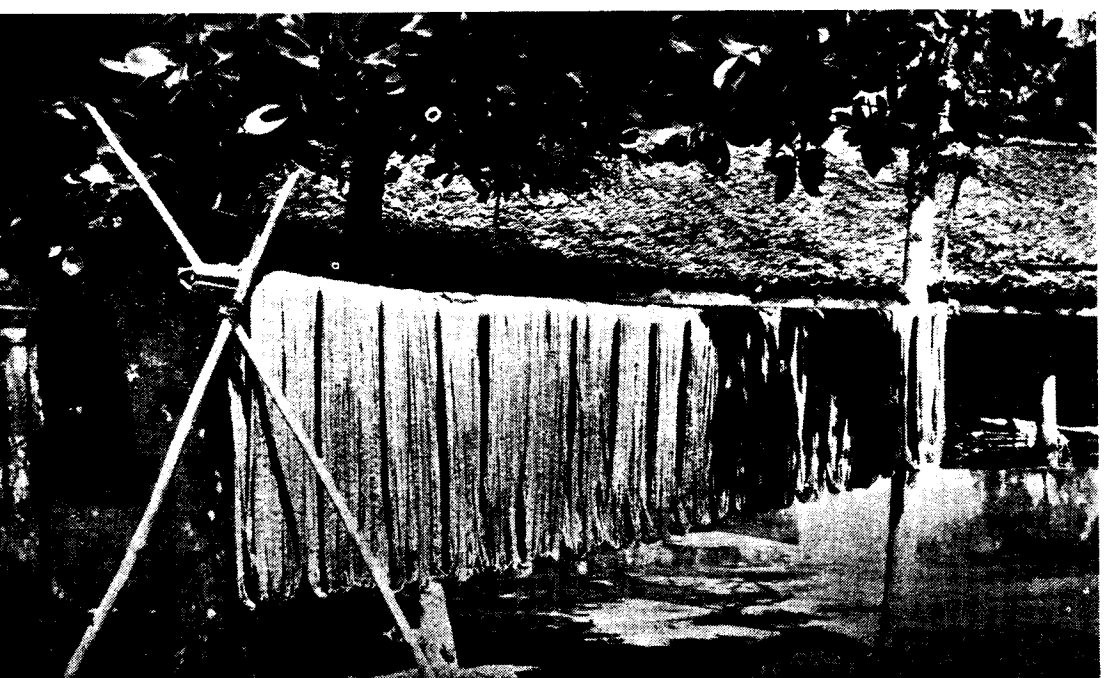

ऊपर : *सूत से घिरा हुआ एक बुनकर*
बाएँ : *धूप में सूत*

हथकर्घा उद्योग में मिल के सूत की काफ़ी खपत होती है
गाँव के अधिकांश बुनकर घर पर ही काम करते हैं

दो-तीन महीने के प्रशिक्षण से ही स्त्रियाँ चटाई बुनने में निपुण हो जाती हैं

सामुदायिक कार्यक्रम के अन्तर्गत गाँववालों को चमड़ासाज़ी की नवीन पद्धतियाँ सिखाई जा रही हैं

गुड़ बनाने का पुराना तरीका जिसके आधुनिकीकरण की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है

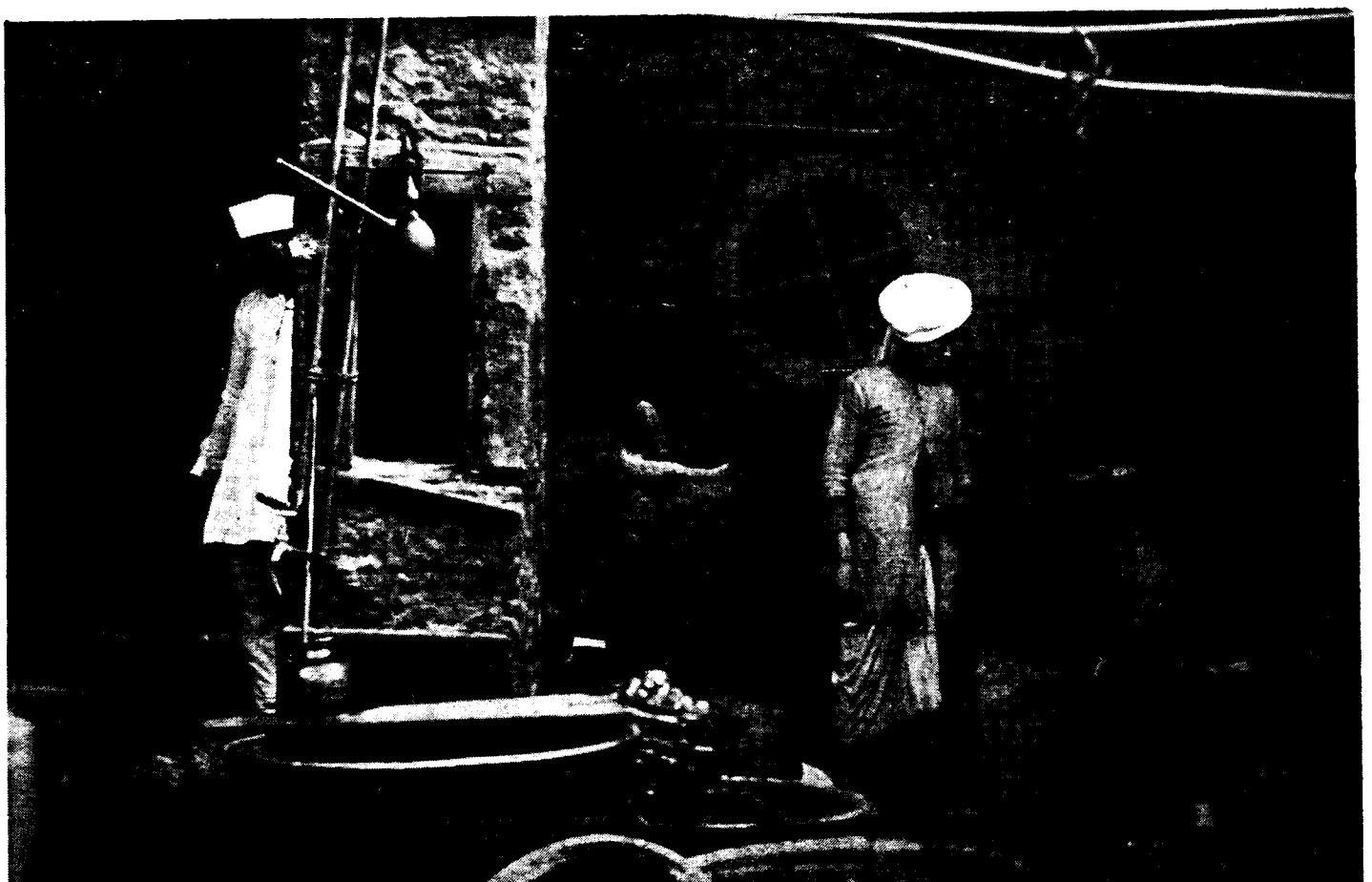

पश्चिम बंगाल की कहानियाँ

मुकुल गुप्त

पश्चिम बंगाल के छोटे से ज़िले वीरभूम के एक गाँव में पिछले साल १६ अगस्त की नीरव रात्रि में एक अप्रसिद्ध व्यक्ति का देहावसान हो गया। यह दुखान्त घटना अचानक ही घटी थी, इस लिए गाँववालों के दुख का ठिकाना न था। सुबह होते ही एक व्यक्ति यह समाचार भेजने डाकखाने की तरफ़ दौड़ा। कुछ ही देर बाद यह खबर कलकत्ता में पश्चिम बंगाल के विकास आयुक्त श्री सुशील डे के पास पहुँच गई। श्री डे भी खबर पढ़ते ही भौंचक्के रह गए। उनकी आँखों से टपटप आँसु गिरने लगे। वह बड़बड़ाए—"नए भारत का एक अज्ञात परन्तु महान् निर्माता अनजाने ही चल बसा। आज हम में से वह विनम्र और पवित्र आत्मा उठ गई है, जो आज बंगाल के गाँवों की नवीन जागृति की भावना से परिपूर्ण थी।"

जिस व्यक्ति के मर जाने पर इतने लोग दुखी थे उसका नाम था दुगाई करमाकर। वह एक विनम्र लोहार था। गाँव के बाहर आम के एक विशाल पेड़ के नीचे उसकी पुरानी दुकान थी। करमाकर दुख-सुख में गाँववालों का सच्चा मित्र और सलाहकार था।

कुछ साल पूर्व जब उस क्षेत्र के ग्राम सेवक ने करमाकर की दूकान के पास उस गाँव में पहली सभा की, तो एकत्रित ग्रामवासियों में उत्साह नाम की कोई चीज़ नहीं थी। वे उसकी बात केवल शिष्टता के नाते सुन रहे थे, विशेष रुचि या उद्देश्य से नहीं। आन्तरिक नम्रता के कारण ही उन्होंने उस उत्साही नवयुवक से उलझन में डाल देनेवाले ऐसे प्रश्न नहीं पूछे, जिनसे उसकी भावनाओं को ठेस पहुँचती। परन्तु उनकी आँखों में अविश्वास और सन्देह स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था। उन अनेक आँखों में दो आँखें ऐसी भी थीं जिनसे जोश टपक रहा था और जिन्हें उस नवयुवक की बातें अन्धकार में प्रकाश के समान दिखाई दे रही थीं। वे थीं दुगाई की दो आँखें।

दुगाई को अपना गाँव जी-जान से प्यारा था। गाँव को अव्यवस्थित देख कर उसका हृदय रो उठता था। उसके साधन समिति थे परन्तु उसका हृदय बलवान और चक्षु दूरदर्शी थे। अगर गाँव में किसी अन्य व्यक्ति का भी यही विश्वास होता, अगर कोई और भी उसके साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर गाँव के हित के लिए काम करने को तैयार होता, तो गाँव की सभी कमियाँ पूरी हो जातीं। नवयुवक ग्राम सेवक ने उस दिन सायंकाल गाँववालों को अपने सपनों का महल बनाने का तरीका बताया था। सीधे-सादे तर्कों से उस नवयुवक ने साबित किया था कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम से वे अपने जीवन का कायाकल्प कर सकते हैं। दुगाई की समझ में यह बात बैठ गई। उसने सोचा कि एक क्षण भी खोना बेकार है। उसके गाँव कुलकुरी को नया जीवन मिलना ही चाहिए। बस वह इस काम में जी जान से जुट गया। केवल मृत्यु ही ने उसे अपने प्रिय आदर्श से अलग किया। उसका जीवन त्याग और सेवा की एक कहानी बन गया था।

दुगाई ग्राम्य बंगाल की नव-जागृति का प्रतीक बन गया था। दरिद्रता में पैदा होनेवाले करोड़ों देहातियों के लिए काफी समय से नगरों में बसनेवाले पढ़े-लिखे लोग आँसू बहाते आए हैं। यह भी अनेक बार दुहराया गया है कि वास्तविक भारत गाँवों में बसता है और अगर गाँववाले ही मर गए तो ज़िन्दा कौन रहेगा। ये लोग गाँवों का सुधार करना चाहते हैं, गाँवों पर अपनी सहानुभूति

की वर्षा करना चाहते हैं। लेकिन गाँव वाले अब दया का पात्र बनने को तैयार नहीं हैं। दुगाई की तरह अब हर गाँव में विद्रोही हैं जो गाँववालों को शहरी दया से बचकर रहने की चेतावनी देते हैं। गाँववालों में अपनी वर्तमान अवस्था से पूर्णतया संतोष की भावना अब नहीं है। इसका सुबूत नीचे दी गई कुछ कहानियाँ हैं जिन्हें मैं बिना किसी अत्युक्ति के बयान कर रहा हूँ।

: २ :

गाँव की नेत्री—मोनी मैंजहन

वीरभूम के छोटे से ज़िले में एक छोटा-सा गाँव है सुकनो। यहाँ की भूमि खुश्क और बंजर है। गाँव के चारों ओर मील भर के क्षेत्र में जल का नामोनिशान नहीं है। गाँव की स्त्रियों को दिन-भर घर का काम-काज करने के पश्चात् निकटतम चश्मे से पानी लाने के लिए दो मील का रास्ता तय करना पड़ता था। बीच में एक जंगल भी पड़ता है, जिसमें से होकर जाना, विशेषकर अन्धकार के समय, खतरे से खाली नहीं था। पीने और सिंचाई के लिए पानी की व्यवस्था हमेशा से उन लोगों के लिए परेशानी का कारण बनी हुई थी। पानी के अभाव में गाँव में जो भी सुधार होता, उसका कुछ भी नतीजा न निकलता। क्या सरकार इस मामले में कुछ भी सहायता नहीं कर सकती थी? अवश्य, बशर्तेकि गाँववाले निर्दिष्ट शर्तों को पूरा कर दें। गाँव में एक पथरीला तालाब भी था, जिसमें पानी बिलकुल नहीं था। सरकार का ऐसा नियम था कि सूखे तालाबों का सुधार तभी किया जाएगा, जब इसमें होनेवाले खर्चे का एक तिहाई भाग लोग दें। लेकिन गाँववाले बहुत दरिद्र थे। दो वक्त रोटी भी उन्हें मुश्किल से मिलती थी। इस काम में पूंजी लगाना उनके बस की बात नहीं थी। अगर वे श्रमदान भी करते, तो उन्हें अपने काम से समय बचाकर ही ऐसा करना पड़ता। फलतः उनकी अपनी आमदनी कम हो जाती और उनके बाल-बच्चों को भूखा रहना पड़ता। गाँव के स्त्री-पुरुषों ने एक बैठक की और एक कार्यक्रम बनाया।

एक दिन अधेड़ उम्र की एक सन्थाल स्त्री मोनी मैंजहन एक अविवाहित जवान लड़की (रिवाज और लज्जा के कारण जिसने अपना नाम नहीं बताया) के साथ विकास-योजना अधिकारी के पास आई और बोली—"आप हमें कुछ भी मज़दूरी दें या न दें, हम तालाब पर काम करने को तैयार हैं।" सन्थाल लोग हमेशा मुस्कराते रहते हैं। गाँव के इन दो प्रवक्ताओं ने मुस्कराते-मुस्कराते गाँववालों का प्रस्ताव अधिकारी के सामने रखा। उन्होंने एक तालाब समिति भी बना ली थी। उसके बाद महीनों तक तीन सौ फावड़े, सूरज की गर्मी और चाँद के प्रकाश में ज़मीन का हृदय चीर कर उसमें से पानी निकालने में निरन्तर लगे रहे। और दयालु भूमि ने एक दिन उन पर दया भी कर दी।

: ३ :

'कल' के लिए 'आज' का त्याग

ग्रामविकास खण्ड के गाँव बाड़ा झरियामारा के दुगू हेमराम की मुस्कान कौन भुला सकता है। इस ३८ वर्षीय आदिवासी के त्याग की कहानी भी उल्लेखनीय है। इस व्यक्ति ने अपना सब कुछ अपने गाँव की भौतिक और मानसिक समृद्धि के लिए दाँव पर लगा दिया। बाड़ा झरियामारा और उसके आस-पास के लोग सभी अनपढ़ थे। ये लोग अक्सर महाजनों की चाल-बाज़ियों का शिकार हो जाते थे। महाजन लोग ऋण से कई गुना अधिक रकम का ऋण-पत्र लिखकर उनसे अंगूठा लगवा लेते थे। ऋण-पत्र के खाली स्थानों पर महाजन जो चाहता था भर देता था, जिसका नतीजा यह होता था कि ग्राम-वासी जीते जी उऋण नहीं हो पाते थे। अगर गाँववाले आँकड़े भी पढ़ पाते, तो महाजनों की चालाकी वे पकड़ लेते। अनपढ़ होने की अनेक हानियाँ हैं, उनमें से एक यह भी है। दुगू हेमराम अक्सर सोचा करता था कि गाँववालों का इस बवाल से कैसे छुटकारा हो। बच्चों को भी अपने माता-पिता के दर्रे पर ही पलते देख उसे दुख होता था। वे भी उन्हीं की तरह अनपढ़ और अज्ञानी थे और न ही उनमें अपना जीवन सुधारने की कोई आकांक्षा थी। ऐसे अवसर पर गाँव में ग्राम सेवक का आगमन हुआ। वह उनकी दरिद्र झोंपड़ियों में उनके साथ रहा। हर रोज़ शाम को वह उनसे उनकी समस्याओं के सम्बन्ध में बातचीत करता और उन समस्याओं का हल भी उन्हें बताता। इस बात से सभी सहमत हो गए कि प्रौढ़ों और बच्चों को शिक्षा देने के लिए एक स्कूल अवश्य ही होना चाहिए। स्कूल के लिए कोई इमारत भी होनी चाहिए। इमारत के लिए फूस, बाँस और रस्सियाँ तो मिल सकती हैं, परन्तु भूमि कहाँ से आएगी? गाँव में किसी के पास फालतू भूमि नहीं थी। दुगू हेमराम गाँववालों की बातचीत चुपचाप सुनता रहा। उसके पास जो थोड़ी-सी भूमि थी, उसके सहारे १० प्राणी पल रहे थे। भूमि के टुकड़े किए जाने का अर्थ था, उसके परिवार का भूखा रहना। लेकिन एक ओर 'आज' की भूख थी और दूसरी ओर सब बालक थे जिन पर गाँव का भविष्य निर्भर था। उसने फ़ैसला कर दिया—"स्कूल के लिए जितनी भूमि चाहिए, मैं देने को तैयार हूँ!"

उस जैसे सीमित साधनों वाले व्यक्ति के लिए यह महान् त्याग था। अब उस की भूमि पर एक समाज शिक्षा केन्द्र खुल गया है, जिस में हर-रोज़ शाम को गाँव के बच्चे और बूढ़े मिलकर पढ़ते हैं। बच्चे पढ़ाई में अपने माता-पिता को मात दे रहे हैं। यह स्वाभाविक भी है। इस बात से माता-पिता को दुख नहीं होता, अपनी सन्तान की प्रगति पर उन्हें खुशी होती है। दुगू हेमराम को अपने भूखे बच्चों का पेट भरने के लिए पहले से भी अधिक परिश्रम करना पड़ता है। लेकिन उसे खुशी इस बात की है कि उसने अपने छोटे से गाँव के लिए कुछ किया है और उस गाँव में उसे अब अन्धकार मिटता दिखाई दे रहा है। उस अन्धकार का स्थान प्रकाश ले रहा है।

: ४ :

नई जिन्दगी, नया रास्ता

कुलकुर के फूलचन्द बौरी और उसकी पत्नी पुत्तू को भी हमें नहीं भूल जाना चाहिए। उनका जीवन उस ग्राम्य मर्यादा का दृष्टान्त है जिसे कष्ट और विपदा डिगाने में असफल रहे। उनका जीवन दरिद्रता, यातनाओं और इस पर भी आत्म-सम्मान का अद्भुत मिश्रण है। किसी समय फूलचन्द एक स्वस्थ व्यक्ति था और अपनी मेहनत की कमाई पर जीवित था। उसका जीवन आनन्दपूर्ण था। परन्तु उसके सुखी संसार पर दुख ने आक्रमण कर दिया। उसे तपेदिक हो गया। इस रोग से वह मरा तो नहीं, परन्तु काम करने योग्य नहीं रहा। उसकी पत्नी पुत्तू पर घर चलाने की ज़िम्मेवारी आ पड़ी। वह एक कमज़ोर स्त्री थी। भीख मांग कर भी रह सकती थी, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। मेहनत की कमाई खाकर जीने में उसका विश्वा था। वह अपनी समस्या लेकर ग्राम सेविका के पास गई। उसने कहा—"मुझे भीख नहीं चाहिए, मुझे काम चाहिए।" क्या वह कोई काम जानती थी? हाँ, वह और उसका पति दोनों मछलियाँ पकड़ने का जाल बनाना जानते थे। लेकिन सूत खरीदने के लिए उनके पास पैसे नहीं थे। ग्राम सेविका ने व्यक्तिगत रूप से कुछ रुपया देना स्वीकार किया। लेकिन पुत्तू इस बात से प्रसन्न नहीं हुई। उसने पूछा—"क्या मुझे सरकार से ऋण नहीं मिल सकता जो मैं किस्तों में लौटा दूँ?"

"सरकार ऋण दे सकती है, परन्तु ज़मानत चाहिए।"

उसकी जमानत कौन देता। "मेरी सच्चाई और मेरे शब्द," उसका गर्वपूर्ण उत्तर था। लेकिन सरकार को ऐसी ज़मानत नहीं चाहिए थी। ग्राम सेविका ने साहस किया, नियमों को एक तरफ़ रखा और उसको रुपए दे दिए। पुत्तू अपनी बात पर अडिग है। हर महीने नियत तारीख को वह ऋण की किस्त अदा करने आती है। उसकी कुटिया में जाइए, एक कोने में चारपाई पर बैठा हुआ उसका रोगी पति जाल बुनता नज़र आएगा। इसको अपने जीवन के टूटे हुए तारों को बाँधना आ गया है, जीवन के वे तार जो आधे रास्ते में ही टूटने लगे थे। फूलचन्द और पुत्तू को अपने आधुनिक जीवन पर दुख नहीं है। हो भी क्यों, उनका जीवन प्रेम, परिश्रम और सम्मान से पूर्ण जो है।

: ५ :

त्यागमूर्ति नादिरशाह

अपने गाँव के लिए त्याग करनेवालों में रौतारा के राज नादिरशाह का नाम सबसे ऊपर है। इसी कारण वह सगाँव के बच्चे-बच्चे के दिल में घर कर गया है। पिछले कई वर्षों से गाँववाले पीने के पानी की कमी के कारण परेशान थे। गाँव के बड़े-बूढ़ों को पंचायती झगड़ों से फुरसत कहाँ थी जो इस ओर ध्यान देते। ग्राम सेवक ने पूछा—"आप लोग आपस में लड़ते क्यों हैं?" उसकी बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। हाँ, कुछ लोगों ने मज़ाक अवश्य उड़ाया। लेकिन वह भी आसानी से हार माननेवाला नहीं था। वह जिससे भी मिलता, यही सवाल कर देता। अन्त में कुछ लोगों ने उसके प्रश्न पर विचार भी करना शुरू किया। वे सोचते, ठीक ही तो है, यह नवयुवक गाँव का वासी नहीं है और गाँव के किसी गुट का सदस्य भी नहीं है, गाँव की गुटबन्दी से इसे कुछ लेना-देना भी नहीं है। इसे गाँव की चिन्ता क्यों लगी है? लोगों ने अपने दिलों को टटोलना शुरू कर दिया। गाँववालों को ध्यान देता देख ग्राम सेवक ने भी एक कार्यक्रम तैयार किया, जिससे सभी सहमत थे। पीने के पानी की समस्या सब के सामने थी। क्यों न इसी से श्रीगणेश किया जाए?

उसने पूछा—"गाँव में कुआँ होना चाहिए या नहीं?" इस प्रश्न पर दो मत नहीं थे। "तो क्यों नहीं कुआँ खोदने में जुट जाते।" ग्राम सेवक की बात का असर हुआ और कुआँ खोदने की योजना बना ली गई। कुएँ के लिए भूमि भी दान में ले ली गई। जब काम आधा ही हुआ था कि दीवारें गिर पड़ीं। विशेषज्ञों ने काम बन्द करने की सलाह दी। नादिरशाह जो राज था, विशेषज्ञों की बात चुपचाप सुन रहा था। वह अड़ गया। अधूरा काम कैसे छोड़ा जा सकता है? काम वह अवश्य समाप्त करेगा। उसने काम फिर शुरू किया और एक रोज़ काम

[शेष पृष्ठ [illegible] पर]

एक बाल प्रदर्शनी

सुशील वर्मा

सामुदायिक विकास क्षेत्र में जब पहले-पहल बाल प्रदर्शनी की गई, तो सारे इलाके में एक सनसनी-सी फैल गई। आखिर यह बला क्या है? बच्चों की प्रदर्शनी करने का उद्देश्य क्या है? पहले तो कभी ऐसी बात सुनने में नहीं आई। जितने मुँह उतनी बातें हो रही थीं। औरतें खास तौर पर परेशान थीं। वे कहती थीं—"हम अपने बच्चों को दूसरों को क्यों दिखाएँ, कोई जादू-टोना कर दे तो। गाँव के बाहर जो बुढ़िया विधवा रहती है, वह जादू-टोने करती है। जब हम उस रास्ते से गुज़रते हैं तो अपने बच्चों को साड़ी से ढक लेते हैं। और यह हैं सामुदायिक विकास-योजना वाले जो हमें अपने बच्चों को खतरे में डालने को कहते हैं।" सब स्त्रियाँ एक स्वर में यही कह रही थीं। एक बूढ़ी स्त्री ने नाक-भौं चढ़ा कर कहा—"सरकार के ढंग ही निराले हैं।"

लेकिन दूसरे पक्ष वालों ने कहा—"यही बात तो तुम लोगों ने तब कही थी जब ग्राम सेवक महाराज हमारे गाँव में आए थे और सड़कें बनाने, कुआँ खोदने, नाले पर बाँध बाँधने, अच्छी किस्म का बीज इस्तेमाल करने और बच्चों को स्कूल भेजने आदि

आदिवासी स्त्रियों के मुख पर सन्देह और हैरानी के भाव नज़र आ रहे थे

के बारे में उन्होंने बातचीत की थी। जब गाँव में टीके लगाने वाला आया, तो भी तुमने वैसा ही किया। उसको बाहर निकाल दिया, यह कह कर कि वह माता देवी पर आक्रमण करने का आदेश दे रहा है। और इस पर भी मज़े की बात यह है कि जिस सड़क पर तुम्हारी बैल गाड़ी या तुम चलते हो, वह भी सामुदायिक विकास-योजना वालों ही ने बनाई है। फिर तुम कहा करते थे कि सरकार लोगों को ज़बरदस्ती इकट्ठा करके बेगार के लिए जगदलपुर ले जाना चाहती है। रही पानी की बात, तो अब तुम नाले से पानी न लाकर उस कुएँ से पानी लाते हो जो ग्राम सेवक ने बनवाया है। और अब स्कूल की इमारत पूरी बन जाएगी तो गाँव के बच्चे जगदलपुर न जाकर यहीं पढ़ेंगे, क्योंकि यहाँ के स्कूल में उन्हें खेती करना भी सिखाया जाएगा और नाचने गाने का भी प्रबन्ध होगा। फिर तुम कैसे कहते हो कि बाल प्रदर्शनी सरकार की एक चाल है जिससे वह हमारे बच्चों की संख्या जान लेना चाहती है। यही बात तुमने सन् १९५१ की जनसंख्या के बारे में भी कही थी ताकि बेगार के लिए लोगों को इकट्ठा करते समय हम अपने बच्चों की संख्या छिपा न सकें। इस पर भी हमें तसल्ली न हो तो बाल प्रदर्शनी से लौट कर हम गाँव के देवता को दक्षिणा दे देंगे ताकि हमारे बच्चे जादू-टोने से बचे रहें।"

इस पर यह निश्चय हुआ कि केवल वही माँ-बाप प्रदर्शनी में अपने बच्चे ले जाएँ जिनके दो-तीन से अधिक बच्चे हैं ताकि अगर उस बच्चे को कुछ हो भी गया, तो परिवार का नाम चलाने के लिए और बच्चे तो रहेंगे। उसी फैसले के अनुसार पोयामी मासा और उसकी दोनों पत्नियाँ डल्लो और जिम्मी अपने बच्चे को प्रदर्शनी में नहीं ले गए। हाँ मौका पाकर पोयामी मासा इस तमाशे को देखने ज़रूर खिसक गया।

इस पहली प्रदर्शनी में भाग लेनेवालों की संख्या अधिक नहीं थी। सच तो यह है कि भाग लेनेवालों से इनामों की संख्या अधिक थी। वातावरण भी स्वच्छन्द नहीं था। आदिवासी स्त्रियों के मुख पर सन्देह और हैरानी के भाव नज़र आ रहे थे।

वज़न करने की मशीन की सूई का भी अच्छा खासा तमाशा रहा। बच्चे के मशीन पर रखते ही सूई क्यों घूमती है? क्या बच्चा इससे कुछ कहता है या मशीन के अन्दर कोई बैठा है? जब उन्हें समझाया गया कि मशीन की सूई से बच्चे का

वज़न मालूम होता है, तो उन्होंने इस ढंग से सिर हिलाया मानो उन्हें यह पहले ही से मालूम हो और बताने पर उन्हें भूली बात याद आ गई हो। सिर तो वह हर अफ़सर की बात पर झट से हिला देते हैं क्योंकि वह बाहरी व्यक्ति से जल्दी से जल्दी छुटकारा पाना चाहते हैं और छुटकारा पाने का इससे अच्छा कोई और तरीका नहीं होता। उनसे दो बिल्कुल विरोधी बातें कहो, वे दोनों पर ही झट से सिर हिला देंगे। बच्चे का वज़न कैसे होता है, यह वे कैसे समझ सकते हैं जबकि उन्होंने आज तक कभी अपना वज़न नहीं करवाया। चीज़ों के वज़न की बात उन्होंने अवश्य सुनी थी, जब वह अपनी उपज बेचने के लिए जगदलपुर की बड़ी मण्डी में जाते थे। लेकिन बच्चों का वज़न क्यों? क्या चीज़ों की तरह उन्हें भी बेचा जाएगा? मरकामी हाँडा की पत्नी के लिए इससे उपयुक्त बोलने का कोई अवसर न था। वह अपने पति से बोली—"मैंने तुम्हें पहले ही चेतावनी दी थी कि सरकार के हथकण्डों से होशियार रहना।"

उन्हें वज़न करने का ढंग अच्छी तरह समझाया गया। योजना उप-अधिकारी ने दो छोटे-बड़े पत्थर मंगवाए और लोगों से पूछा कि दोनों में से कौन-सा भारी है। सबने बड़े पत्थर को भारी बताया। फिर उनको बारी-बारी वज़न करने की मशीन पर रखा गया और यह दिखाया गया कि भारी पत्थर के रखने पर हल्के पत्थर की अपेक्षा सूई आगे बढ़ जाती है। इस तरह और चीज़ें भी तोली गईं, केवल यह सिद्ध करने के लिए कि जिनको वे भारी समझते हैं, उनके मशीन पर रखते ही सूई आगे बढ़ जाती है। इतना सब होने पर भी कुछ लोगों को विश्वास नहीं हुआ और उन्होंने कहा—"जो बच्चा सबसे अधिक चिल्लाता है, उसकी बारी सूई सब से आगे जाती है।"

इनाम बाँटते समय और भी मज़ा आया। पहले तो लोगों को यह समझाने में ही दिक्कत हुई कि पहला, दूसरा और तीसरा आने का क्या अर्थ है। जब अलोसा के बच्चे को प्रथम घोषित किया गया तो सब लोग ठहाका मार कर हँस पड़े। अलोसा का परिवार तो इस बात को लेकर इलाके भर में बदनाम था कि उसके बच्चे सुस्त, देखने में फूहड़ और भद्दे हैं तथा इसी कारण सब की दया के पात्र भी हैं। मोटे होने के कारण वे अच्छी तरह नाच भी नहीं सकते थे। उनके पाँव शरीर का बोझा मुश्किल से सम्भाल पाते थे। तीर कमान चलाने में भी वे अकुशल थे। ताड़ी की एक बोतल पीने के बाद ही वे ज़मीन पर औंध हो जाते थे जबकि सब लोग दूसरी की प्रतीक्षा में रहते थे। और इस अलोसा का बच्चा सरकार की दृष्टि में सर्वोत्तम है। मरकामी हांडा की पत्नी ने पति को कोहनी मार कर फिर कहा—"मैंने कहा था न कि सरकार के ढंग ही निराले हैं।" हांडा की पत्नी के मुख

बच्चे के मशीन पर रखते ही सूई क्यों घूमती है?

पर विजय की मुस्कान थी परन्तु मरकामी हांडा ने अपनी पत्नी की बात सुनी-अनसुनी कर दी। विकास-योजना उप-अधिकारी ने सूची में दूसरा नाम पढ़ने के लिए ऐनक ऊपर की। असिस्टैंट सर्जन खुश नज़र आ रहा था। एकत्रित लोगों की मुस्कराहट को उसने अपने चुनाव का अनुमोदन समझा था। उसे डिग्री मिले अभी एक ह साल हुआ था और एक महीना हुआ उसकी उस क्षेत्र में नियुक्ति हुई थी। परन्तु गाँव का मुखिया सारी बात समझ गया था, इसलिए वह काफ़ी गम्भीर नज़र आ रहा था। इस बार हमेशा की तरह, जगदलपुर से कोई साहब या मेम साहब इनाम बाँटने नहीं आए थे। इसका कारण विकास-योजना उप-अधिकारी ने तहसीलदार को बताते हुए कहा—"जनता के सामुदायिक कार्यक्रम में जनता ही को उसका महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए, अन्य लोगों को ऊँचा स्थान क्यों दें।" लेकिन तहसीलदार महोदय इससे सहमत नहीं थे।

इनाम बाँटने के बाद स्त्री-पुरुष अपने बच्चों के साथ गाँव वापस लौटे। रास्ते में उन्होंने कार्यक्रम पर टीका-टिप्पणी की। अन्त बड़ा ही अच्छा हुआ था। कपड़े, कंघियाँ, साबुन, शीशे और अन्य चीज़ें जो इनाम में दी गई थीं, स्त्रियों ने अपने आँचलों में बाँध ली थीं।

गाँव लौटने पर लोगों ने देवता पर मुर्गियाँ चढ़ाईं। बच्चों की रक्षा के निमित्त प्रार्थना की गई। इसके बाद दो-तीन दिन तक किसी को चैन नहीं आया। स्त्रियाँ एक-दूसरे से बच्चों के

गाँव लौटने पर लोगों ने देवता को मुर्गियां चढ़ाई

बारे में पूछ-ताँछ करती रहीं। लेकिन बच्चों को कुछ नहीं हुआ। इसके विपरीत किस्मत की मार उन बच्चों पर पड़ी जिनको प्रदर्शनी में नहीं ले जाया गया था। उनमें से एक-दो तो वर्ष भर में ही चल बसे। भगवान् ने भी विकास-योजना कर्मचारियों का साथ दिया। गाँववालों की हैरानी का ठिकाना न रहा जब उन्होंने अलोमा के बच्चे सोनसाई को प्रति दिन अधिक हृष्ट-पुष्ट होते देखा। उसके दाँत अन्य बच्चों से पहले निकल आए और घुटनों चलने में भी वह और बच्चों से तेज़ निकला। गाँव के बाहर रहने वाली बुढ़िया जादूगरनी की नज़र का भी उस बच्चे पर कुछ असर न हुआ। युवक असिस्टेंट सर्जन ने जब यह सब सुना तो वह खुशी के मारे फूला न समाया।

यह दो साल पुरानी बात है। अब फिर मरकामी हांडा के गाँव में बच्चों की प्रदर्शनी हो रही है। अब तो यह गाँव एक छोटी सड़क बनाकर बड़ी सड़क से मिला दिया गया है। प्रदर्शनी में भाग लेनेवालों की संख्या पहले से तिगुनी है। जब ग्राम सेवक ने आखिरी बच्चे का नाम सूची में लिखा, तो न जाने कहाँ से और अनेक बच्चे आ गए। योजना उप-अधिकारी परेशान नज़र आ रहा था, क्योंकि पुरस्कारों की संख्या बहुत कम थी और प्रदर्शनी में भाग लेनेवालों की संख्या बहुत अधिक थी। उन्होंने तुरन्त समाज शिक्षा संगठनकर्त्ता को और चीज़ें खरीदने के लिए जीप पर जगदलपुर भेजा। असिस्टेंट सर्जन महोदय बहुत व्यस्त थे, उन्हें सिर खुजाने की फुर्सत नहीं थी। जब उन्होंने अगले बच्चे का नाम लेने के लिए सिर ऊपर उठाया, तो उन्हें अलोमा दिखाई पड़ी। उसने बच्चे को मशीन पर रखते हुए कहा - "इस बार लड़की है।" असिस्टेंट सर्जन बोला—"बहुत जल्दी हो गई।" अलोमा इस तथ्य को समझे बिना मुस्करा उठी। पास ही खड़ा सोनसाई हैरान होकर अपनी माँ की तरफ़ देख रहा था।

हमने कितनी सफलता प्राप्त की — [पृष्ठ ५ का शेषांश]

'ग्व' 'ग' से भी अनभिज्ञ हैं, उनको मालूम नहीं कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लक्ष्य और उद्देश्य क्या हैं। कम से कम ऐसे अफ़सरों से यह आशा करना बिलकुल बेकार है कि वे उस जोश से काम करेंगे जो कोई बड़ा काम करते समय होना चाहिए। यह सब होते हुए भी उनके पास काफी पैसा है और वे इसको व्यय भी करते हैं, यह न जानते हुए कि वे क्या कर रहे हैं।

विकास कार्यकर्ताओं को (ऊपर से नीचे तक) ठीक प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए, खास तौर पर उच्च अफ़सरों को, क्योंकि उन पर विकास कार्य के पथ-निर्देशन की ज़िम्मेदारी है। कहीं-कहीं कोई ठीक व्यक्ति भले ही काम कर रहा हो, लेकिन सारे कर्मचारियों की जाँच-पड़ताल अनिवार्य है। उन्हें जो भी काम सौंपा जाए, उसके लिए उन्हें विशिष्ट प्रशिक्षण दिया जाए।

ज़िला मजिस्ट्रेट के विकास-कार्य के सम्बन्ध में क्या-क्या कर्तव्य हैं, इसके सम्बन्ध में बहुत गलतफहमियाँ हैं। मेरा व्यक्तिगत मत यह है कि जिस अवस्था में एक ज़िला मजिस्ट्रेट कार्य करता है, उससे इस विशिष्ट कार्य की तरफ खास ध्यान देने की आशा करना बेकार है। इसके अलावा, ऐसा महसूस किया गया है कि ज़्यादातर ज़िला मजिस्ट्रेटों की इस काम में कोई रुचि नहीं है। वह वैसे भी इतना व्यस्त रहता है कि रोज़मर्रा के झगड़ों से उसे फुर्सत नहीं मिलती।

समय आ गया है कि हम यह सोचें कि सरकार को देश में नई विकास-योजनाएँ आरम्भ करनी चाहिएँ या नहीं (वैसे इस कार्य में कोई बुराई नहीं और इसके पीछे उद्देश्य भी अच्छा है) क्योंकि शुरू करने से पहले हमें यह देख लेना चाहिए कि देश में विकास-कार्य कैसे चल रहा है। उपयुक्त तो यही है कि पहले हमने जो विकास-योजनाएँ शुरू की हुई हैं, उनकी दशा सुधारने की तरफ़ ध्यान दें। यह माना कि कुछ स्थानों में प्रशंसनीय कार्य हुआ है, लेकिन अधिकांश जगह हमारी आशाओं पर पानी फिर गया है। हमें यह जानने की कोशिश करनी चाहिए कि हमने वास्तवमें कितनी सफलता प्राप्त की है।

एक महान् परिवर्तन

एस० विश्वनाथन्

तंजावूर ज़िले में पहले पहल मई १९५४ में 'तंजावूर ज़िला योजना' के नाम से राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम की शुरुआत हुई थी। इस विकास-योजना के नामकरण से ही यह बात स्पष्ट हो गई है कि इस में कोई विशेष बात अवश्य है जो इसे अलग नाम दिया गया। इस विकास-योजना की विशेषता यही है कि इसकी व्यवस्था अखिल भारतीय व्यवस्था से बिलकुल भिन्न है। इस विकास-योजना को मुख्यतः राजस्व विभाग ही चला रहा है। कुछ समय पूर्व तक वहाँ न तो ग्राम सेवक थे और न समाज शिक्षा संगठनकर्ता ही। प्रशासन सारा काम पुराने ढर्रे से चला रहा था। पिछले वर्ष जुलाई मास में ग्रामसेवक और समाज शिक्षा संगठनकर्ता के आ जाने से सारी विकास-योजना का रूप धीरे-धीरे बदल रहा है। वातावरण भी काफ़ी बदल रहा है। अपने प्रशिक्षण, प्रकृति तथा स्वभाव के कारण उन्होंने लोगों का हृदय जीत लिया और उनके साथ मैत्रीपूर्ण ढंग से कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करने लगे। ग्राम सेवक और समाज शिक्षा संगठनकर्ता को छोड़कर बाकी कार्यकर्ताओं में जनता से व्यवहार करते समय आदर्शवादी दृष्टिकोण का अभाव होता है। उनको विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिसके अभाव में उनका विकास-योजना में खपना असंभव है।

तंजावूर ज़िले में कुम्बाकोनम के समीप स्वामीमलई नामक एक गाँव है। इस गाँव के लोगों को बस इतना ज्ञान है कि सरकार ने गाँव में एक विकास पंचायत बनाई है जो गाँव में एक प्रसूतिका केन्द्र बनाने में लगी हुई है, हालाँकि गाँव से २ मील की दूरी पर ही कुम्बाकोनम में एक सरकारी अस्पताल है। यह उनको महसूस ही नहीं हुआ था कि यह केन्द्र स्वयं उनके परिश्रम से बनाया जा रहा है। ग्राम विकास पंचायत के कार्य-क्षेत्र से वह अनभिज्ञ थे। इस विकास-योजना के सिद्धान्त और महत्व का भी उन्हें कोई ज्ञान नहीं था। इस सबका कारण जानने में हमें अधिक कठिनाई नहीं होगी। ग्राम विकास पंचायत ने कभी इस चीज़ की ज़रूरत ही नहीं समझी थी कि गाँववालों को भी इस सम्बन्ध में कुछ बताया जाए। अधिकारी वर्ग की भी जनता में आवश्यक प्रचार करने में कोई रुचि नहीं थी।

यह समझते हुए कि स्थानीय सामाजिक कार्यकर्ताओं का सहयोग बहुत उपयोगी होगी, ग्राम सेवक और समाज शिक्षा संगठनकर्ता ने वहाँ के एक सामाजिक कार्यकर्ता से जो भारत सेवक समाज का भी सदस्य था, सम्पर्क स्थापित किया और उससे राष्ट्रीय विस्तार सेवा के प्रसार में सहयोग देने को कहा। जब खण्ड विकास अधिकारी गाँव का दौरा करने आए तो उन्होंने सामाजिक कार्यकर्ता का उनसे परिचय कराया। उस कार्यकर्ता ने इस दिशा में सहयोग देने की बात मान ली, क्योंकि वह पहले ही गाँव में काँसे की मूर्तियाँ बनानेवालों का एक उत्पादन और प्रशिक्षण केन्द्र चला रहा था। यह समझते हुए कि सामुदायिक विकास की हरेक योजना में हरिजनों को महत्व दिया जाना चाहिए, उस सामाजिक कार्यकर्ता ने यह बात सुझाई कि आरम्भ में गाँव के हरिजनों पर ही ध्यान दिया जाए। इस बात से अधिकारी लोग सहमत हो गए और सब के सब एक जीप में बैठकर हरिजन बस्ती की तरफ़ चले। वहाँ वे हरिजनों की समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से गए थे।

जीप एक झोंपड़ी के द्वार पर जाकर खड़ी हो गई। इस झोंपड़ी में बस्ती का एक हरिजन अध्यापक शाम को स्कूल लगाया करता है। अध्यापक ने सब का स्कूल में स्वागत किया। इन लोगों ने उस अध्यापक से मुहल्ले के हरिजनों को उस स्कूल में इकट्ठा करने की प्रार्थना की, क्योंकि वे उन्हें स्व-सहायता के लाभ बताना चाहते थे। थोड़ी देर में स्त्रियों और पुरुषों की काफी भीड़ वहाँ जमा हो गई। ज्यों ही खण्ड विकास अधिकारी भीड़ के सामने बोलने के लिए खड़े हुए कि उन्होंने देखा कि भीड़ में एक व्यक्ति नशे में चूर है। यह बात उसके बोलने के ढंग और व्यवहार से साफ़ प्रकट हो रही थी।

वक्ताओं ने ठीक ही महसूस किया कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम के किसी पहलू को शुरू करने से पहले, हरिजनों को शराब पीने की हानियाँ बताना ठीक होगा। इसलिए उनमें हरेक ने बारी-बारी एकत्रित लोगों को यह बताया कि शराब पीने से उनके स्वास्थ्य और उनकी आर्थिक स्थिति पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है। उस वक्त समझाने-बुझाने से काम लिया गया। जब वे लोग उनको समझा रहे थे, मुहल्ले की अन्य हरिजन स्त्रियाँ भी वहाँ आ गईं। उन्होंने भी अधिकारियों से प्रार्थना की कि उनके पतियों से शराब छुड़वाने के लिए कुछ न कुछ अवश्य किया जाए। इस सभा का एकदम प्रभाव पड़ा और धीरे-धीरे वे लोग कसम खाने लगे कि वे भविष्य में नशा नहीं करेंगे। उन्होंने आगन्तुकों को शराब न पिला कर, सोडा पीने को दिया। विकास कार्यकर्ताओं और भारत सेवक समाज के कार्यकर्ता ने सोडा पीने से इंकार कर दिया और कहा—"जब तक आप लोग काली देवी के सामने शराब न पीने की प्रतिज्ञा न करेंगे, हम लोग आपके हाथ से कुछ भी स्वीकार नहीं करेंगे।" हरिजनों ने आगन्तुकों को इस बात का आश्वासन दिया और सारा मामला ग्राम सेवक और भारत सेवक समाज के कार्यकर्ता पर छोड़कर सब लोग वहाँ से चल पड़े।

ग्राम सेवक और भारत सेवक समाज के कार्यकर्ता इसके बाद अक्सर वहाँ आते-जाते रहे और हर बार वहाँ के हरिजनों के रहन-सहन के ढंग में सुधार करने की कोशिश करते। इससे वहाँ के हरिजनों में चेतना आगई। ६ सितम्बर, १९५५ शुक्रवार के दिन प्रातःकाल नहा-धोकर वे लोग काली के मंदिर में इकट्ठे हुए। ग्राम सेवक, भारत सेवक समाज के कार्यकर्ता और समाज शिक्षा अध्यापक की उपस्थिति में उन लोगों ने भविष्य में शराब न पीने की और न ही गैर-कानूनी तौर पर शराब खींचने की क़सम खाई। गाँव के इतिहास में ऐसी अभूतपूर्व घटना कभी नहीं हुई थी। पाँच व्यक्तियों की एक समिति बनाई गई जिसका काम यह देखना था कि कोई व्यक्ति जिसने नशा न करने की सौगन्ध खाई है, शराब तो नहीं पीता। प्रथानुसार समिति को शपथ तोड़ने वालों को सज़ा देने का भी अधिकार दिया गया।

नशाबंदी के कारण बचनेवाले पैसे से उन्हें लाभ पहुँचाने के लिए एक बचत योजना भी शुरू की गई। उस क्षेत्र में लाटरी कोष से लगभग सभी गाँव वाले परिचित थे। उसमें थोड़ा सा संशोधन कर दिया गया। जिस सदस्य के नाम की लाटरी खुलती थी उसको कोष में से रुपया लेकर एक गाय, बैल, बछड़ा, भेड़ या मुर्गियाँ खरीदने की इजाज़त दे दी जाती थी। नशे के कारण हरिजनों की शक्ति में काफी ह्रास हुआ था, इसलिए उनके स्वास्थ्य में सुधार करना अनिवार्य था। इसके लिए दूध आवश्यक था। इसलिए निर्णय हुआ कि बस्ती वाले पहले भैंसें खरीदें। बस्ती के ४८ परिवारों में से ३४ इस योजना में भाग ले रहे हैं। ३४ सदस्य हर सप्ताह एक-एक रुपया कोष में जमा करते हैं और हर सप्ताह लाटरी डाली जाती है। उपरोक्त समिति कोष के पैसे की देख-रेख करती है। जिस व्यक्ति के नाम लाटरी खुलती है, यह समिति की सहा-

"भगवान् करे ऐसे अतिथि रोज आएँ, कक्षा से तो पिण्ड छूटेगा!"

यता से गाय खरीदता है। यह गाय तब तक ३४ के ३४ सदस्यों की मल्कियत रहेगी जब तक वह व्यक्ति, जिसने यह गाय खरीदी है, ३४ बार अपना चन्दा नहीं दे लेता। इस कोष की बदौलत अब तक हरिजन ७ गायें खरीद चुके हैं। कोष के एक सदस्य के विषय में अन्य सदस्यों ने एकमत से फ़ैसला किया था कि कोष की पूंजी से उसे गाय खरीदने के स्थान पर, अपना विवाह करने दिया जाए। वहाँ के लोगों में बहुत मानसिक परिवर्तन हुआ है। उन्होंने अपनी बुरी आदतें छोड़कर अच्छी आदतें अपना ली हैं। वे आत्म-निर्भरता को अन्य क्षेत्रों में भी अपनाना चाहते हैं। परन्तु इसके लिए उन्हें उचित निर्देशन की आवश्यकता है। भारत सेवक समाज को कार्यकर्ता और ग्रामसेवक दोनों उनके मित्र और परामर्शदाता हैं।

२२ अक्तूबर को मद्रास सरकार के ग्राम सुधार विभाग के डायरेक्टर इस बस्ती में आए और हरिजनों के जीवन में हुए परिवर्तन को देख कर बेहद प्रसन्न हुए। हरिजनों के मनोरंजन के लिए उन्होंने एक क्रीड़ा केन्द्र खोलने का सुझाव रखा। भारत सेवक समाज का कार्यकर्ता इस समय इस केन्द्र की स्थापना करने में व्यस्त है। इस बस्ती में हुए काम से नज़दीकी मुहल्ले के हरिजनों का ध्यान भी उधर गया है। वे लोग भी अपने को सुधारने की कसमें खा रहे हैं। हरिजनों में नशाबन्दी करके राष्ट्रीय विस्तार सेवा ने वह काम किया है जो अब तक कोई न कर सका था।

★

पश्चिम बंगाल की कहानियाँ — [पृष्ठ २१ का शेषांश]

करते हुए मलवे के नीचे दब कर मर गया। सारा गाँव दुखी था। एक कुएँ की खातिर नादिरशाह ने जान दे दी थी। नादिरशाह ने अपनी जान देकर गाँववालों के पुरुषत्व को चुनौती दी थी। वह फिर से काम में जुट गए, काम को खत्म करने के लिए। आपस में हमेशा झगड़नेवाले लोगों को नादिरशाह के नाम से प्रसिद्ध इस कुएँ ने एक नया सबक़ सिखाया है।

: ६ :

विरोध हुआ करे !

राधानगर के सुरेन कालन्दी से गाँव के सभी लोग अप्रसन्न थे। वे लोग उसको सन्देह और अविश्वास की दृष्टि से देखा करते थे। वह एक ग़रीब कारीगर है और उसे अपने पेशे पर गर्व है। वह पत्थरों को काटकर बर्तन आदि उपयोगी चीज़ें बनाता है। पैसा न होने के कारण उसकी बनाई हुई चीजें उपयोगी तो अवश्य होती थीं, लेकिन देखने भालने में इतनी अच्छी नहीं होती थीं। उसने ग्राम सेवक से इस सम्बन्ध में सहायता माँगी। गाँव के महत्वपूर्ण लोगों ने ग्राम सेवक को चेतावनी दी कि वह उससे होशियार रहे क्योंकि पैसा लेते ही वह शराब पीने दौड़ेगा। सुरेन कालन्दी और उसके कबीले के सात अन्य कारीगरों ने यह सब बातें सुनीं। सुरेन कालन्दी ने दृढ़तापूर्वक उन लोगों का खण्डन किया। उल्टे उन लोगों पर यह दोष लगाया कि उन्होंने कभी उनकी सहायता करने की कोशिश नहीं की। ग्राम सेवक ने सब कुछ सोचा-समझा और उनको कुछ रुपया उधार दिलवा दिया।

कालन्दी और उसके साथियों ने पैसे का सदुपयोग किया और कुछ समय पश्चात् लौटा भी दिया। इससे उन्होंने अपने धन्धे को बढ़ाया। एक साल बाद जब सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन के सचिव ने इस क्षेत्र का दौरा किया तो इन कारीगरों के घरों को देखकर वह बोले—"क्या उस ऋण से आप लोगों को कुछ लाभ हुआ है?" "क्यों नहीं!" एक व्यक्ति ने मुस्कराते हुए कहा—"अब तो हम नहाने के पहले सिर पर तेल भी लगाते हैं।" यह बात सुनने में छोटी प्रतीत होती है लेकिन उन लोगों के लिए जो तेल सिर्फ़ खाना पकाने में इस्तेमाल करते हैं, सिर पर तेल लगाना भी बड़ी बात है।

× × ×

मेरी डायरी ऐसी कहानियों से भरपूर है। गाँवों में रहने वाले छोटे-छोटे लोगों की अपने ढंग से सुधार करने की कोशिश करने की यह कहानियाँ, शायद शहरी लोगों को महत्वपूर्ण न लगें क्योंकि उनको तो वैज्ञानिक तड़क-भड़क पसन्द है और वे हर चीज़ को रुपए के मापदण्ड से आँकते हैं। लेकिन प्राकृतिक वातावरण में पनपने वाले जीवन के शुद्ध सत्य को लेकर यह जो परीक्षण किया जा रहा है, वह वास्तव में साहसपूर्ण है।

पश्चिम बंगाल के एक गाँव में, कुछ लोगों को शशि नाम का बढ़ई ग्राम विनिमय स्कीम के सम्बन्ध में समझा रहा था। सरकार की शक्ति और सत्ता का प्रतीक ज़िलाधीश भी वहीं था। वह बोला—"तुम्हारी स्कीम में कई ऐसी कठिनाइयाँ हैं, जिन पर तुम्हारी नज़र नहीं गई।"

इस पर शशि बोला—"क्या मैं आप से यह प्रार्थना कर सकता हूँ कि आप कुछ दिन के लिए अपनी मेज़-कुर्सी छोड़ कर हमारे साथ काम करें। तब आप देखेंगे कि कठिनाइयाँ आप ही आप कैसे खतम भी हो जाती हैं।"

सीधे-सादे शब्द हैं और सीधे-सादे ढंग से कहे गए हैं। ये शब्द गाँव की नई चेतना के प्रतीक हैं। वे लोग गर्व के साथ कहते हैं—"हाँ, हम यह कर सकते हैं।"

दूसरी पंचवर्षीय योजना का प्रारूप

योजना कमीशन द्वारा प्रकाशित दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारूप की रूपरेखा के अनुसार योजना का मुख्य लक्ष्य राष्ट्रीय आय में लगभग २५.६ प्रतिशत तथा प्रति व्यक्ति औसत आय में १८ प्रतिशत की वृद्धि करना है।

अनुमान है कि राष्ट्रीय आय, १९५५-५६ की आय ९,६४५ करोड़ रुपए से बढ़कर १९६०-६१ में १२,०२० करोड़ रुपए तक पहुँच जाएगी और प्रति व्यक्ति औसत आय बढ़कर २९६ रुपए हो जाएगी जो १९५५-५६ में २५१ रुपए है।

योजना के अनुसार सरकारी क्षेत्र में ४,८०० करोड़ रुपए तथा निजी क्षेत्र में २,३०० करोड़ रुपए व्यय होने का अनुमान है। दूसरी योजना इस वर्ष अप्रेल से आरम्भ होगी।

योजना की अवधि में कुल जितना व्यय होगा, उसका लगभग ५० प्रतिशत भाग उद्योगों, खनिजों, परिवहन तथा संचार की मदों पर खर्च होगा। कृषि तथा सिंचाई का भी प्रमुख स्थान है, जिन पर २० प्रतिशत से भी अधिक व्यय होगा। इसमें से बाढ़ नियंत्रण तथा सिंचाई के कार्यक्रमों पर लगभग ९ प्रतिशत तथा सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं को मिलाकर कृषि पर लगभग १२ प्रतिशत खर्च होगा। योजना के कुल प्रस्तावित व्यय का २० प्रतिशत समाज सेवाओं पर व्यय होगा। इस मद में आवास तथा विस्थापितों का पुनर्वास भी शामिल है।

योजना में उद्योगों के विकास के खर्च में काफ़ी वृद्धि कर दी गई है। लगभग ७०० करोड़ रुपए बड़े उद्योगों तथा खनिजों के विकास पर तथा लगभग २०० करोड़ रुपए छोटे तथा ग्राम उद्योगों पर व्यय करने का विचार है।

पहली योजना की अपेक्षा दूसरी योजना में उत्पादन तथा सेवाओं में जितनी वृद्धि होगी उसका अनुमान इस प्रकार है: उद्योग तथा सम्बद्ध क्षेत्र–१८ प्रतिशत; खनिज—५६ प्रतिशत; बड़े कारखाने – ६२ प्रतिशत; छोटे उद्योग ३१ प्रतिशत; निर्माण—३३ प्रतिशत; वाणिज्य, परिवहन तथा संचार—२९ प्रतिशत; अन्य सेवाएँ—१५ प्रतिशत; कुल राष्ट्रीय उत्पादन २५.६ प्रतिशत।

अनुमान है कि कृषि उपज में १९५६ से १९६१ के बीच १८ प्रतिशत की वृद्धि होगी। अनाज की उपज में १ करोड़ टन या १५ प्रतिशत तथा अन्य कृषि वस्तुओं की उपज में इससे भी कुछ अधिक वृद्धि होने की आशा है। कपास, चीनी तथा तेलहन के उत्पादन में क्रमशः ३१,२९ तथा २७ प्रतिशत वृद्धि होनेका अनुमान है। सिंचाई व्यवस्था तथा कृषि वस्तुओं के उत्पादन और हाट व्यवस्था की प्रणालियों में पर्याप्त सुधार होगा। सामुदायिक विकास-योजना कार्यक्रम से लाभ उठानेवाले लोगों की संख्या ८ करोड़ से बढ़कर ३३ करोड़ २० लाख तक पहुँच जाएगी। गाँवों की ऋण व्यवस्था के सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप इस विषय में सुधार करने की जो सिफारिश की गई है, उसके अनुसार देश के बड़े भारी क्षेत्र में कार्य आरम्भ किया जाएगा।

१९६१ तक ६ से ११ वर्ष तक के ६० प्रतिशत बच्चों और ११ से १४ वर्ष तक के २९ प्रतिशत बच्चों को अनिवार्य शिक्षा मिलने लगेगी। प्रशिक्षित अध्यापक भी काफी संख्या में तैयार हो जाएँगे और प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था में भी आमूल सुधार हो जाएगा। आशा है कि १९६० में ४,८००

"पाठ्यक्रम में से गणित निकाल दें तो मैं रोज़ एक घण्टा श्रमदान करने को तैयार हूँ!"

टेक्नीकल शिक्षा प्राप्त स्नातक और इंजीनियरी का डिप्लोमा पाने वाले ७,६२५ व्यक्ति विकास कार्य के लिए मिल सकेंगे। डाक्टरों, परिचारिकाओं और स्वास्थ्य सहायकों आदि चिकित्सा कर्मचारियों की संख्या में भी क्रमशः ११,२७ और ७५ प्रतिशत वृद्धि होगी। यह वृद्धि चिकित्सा कालेजों और अस्पतालों के प्रस्तावित विस्तार के कारण होगी।

दूसरी योजना में ८० लाख लोगों को काम देने की जो व्यवस्था की गई है, उसमें शहरी और ग्राम्य क्षेत्र के रोज़गार का अनुपात ४७:५३ होगा। इस प्रकार ऐसा मालूम होता है कि शहरी क्षेत्र में जितने नए काम चाहने वाले बढ़ेंगे, उनको शहरों में ही काम मिल जाएगा। योजना में होने वाले कामों से कृषि के अलावा अन्य क्षेत्रों में ५२ लाख लोगों को काम मिलने का अनुमान है। इसके अलावा योजना से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में २६ लाख लोगों को और काम मिल सकता है। विविध सेवाओं इत्यादि के विस्तार के कारण कृषि के अलावा अन्य क्षेत्रों में प्रायः ८० लाख लोगों को काम मिलने की आशा है। ग्राम्य क्षेत्रों में भी रोज़गार इतनी मात्रा में बढ़ जाएगा कि वर्तमान बेरोज़गार व्यक्ति और आगे रोज़गार चाहने वालों को काम मिल सके।

केन्द्र तथा राज्यों की योजनाओं की जाँच से पता चलता है कि मोटे तौर से १० लाख से अधिक शिक्षित लोग सरकारी कामों में खप जाएँगे। इसके अलावा व्यापार, वाणिज्य आदि में तथा निजी उद्योगों में जो २७ लाख जगह होंगी, उनमें से भी कुछ शिक्षित व्यक्तियों के हिस्से आएँगी। वर्तमान कर्मचारियों के अवकाश प्राप्त करने से भी नए लोगों के लिए रोज़गार की सम्भावनाएँ बढ़ेंगी।

जिस नमूने की रूपरेखा इस योजना के लिए बनाई गई है उसे कार्यान्वित करने के हर काम में जनता अपना पूरा योग दे। लोगों को अपने समस्त साधन जुटाकर १,२०० करोड़ रुपए यानी योजना के कुल खर्च का २५ प्रतिशत कर्ज़ के रूप में देना होगा। वर्तमान दर पर राजस्व से ३५० करोड़ रुपए प्राप्त होंगे और ४५० करोड़ रुपए उगाहने के लिए नए कर लगाने होंगे। रेलों से १०० करोड़ रुपए और प्राविडेंट फंड जैसी मदों से २५० करोड़ रुपए मिलेंगे।

योजना की यह रूपरेखा देश के गण्यमान्य नेताओं तथा अन्य बहुत से व्यक्तियों के परिश्रम का फल है। इसके बनाने में देश के हर क्षेत्र के स्त्री-पुरुषों ने अपना बहुमूल्य समय और अनुभवशील परामर्श दिया है। इसके तैयार करने में जिस व्यापक सहयोग और उत्साह का परिचय मिला, वह इसके पूरा होने का शुभ लक्षण है।

★

योजना पर खर्च और उसका बँटवारा

दूसरी योजना की अवधि में केन्द्र और राज्य की सरकारों का विकास के कामों पर कुल ४,८०० करोड़ रुपए खर्च बैठेगा। खर्च की मुख्य-मुख्य मदें ये हैं—

मद	पहली योजना (करोड़ रुपयों में) कुल निर्धारित खर्च	प्रतिशत	दूसरी योजना (करोड़ रुपयों में) कुल निर्धारित खर्च	प्रतिशत
१. खेती और सामुदायिक विकास	३७२	१६	५६५	१२
२. सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण	३६५	१७	४५८	६
३. शक्ति (बिजली)	२६६	११	४४०	६
४. उद्योग और खनिज	१७६	७	८६१	१६
५. परिवहन और संचार	५५६	२४	१,३८४	२६
६. समाज सेवाएँ, आवास और पुनर्वास	५४७	२३	६४६	२०
७. विविध	४१	२	११६	२
कुल योग	२,३५६	१००	४,८००	१००

दूसरी योजना में हमारा कार्यक्रम

गाँवों की जनता के कल्याण के लिए चालू की गई विकास-योजनाओं में सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रमों का महत्व सबसे अधिक बढ़ गया है। योजनाओं को बनाने और उन्हें कार्यान्वित करने में जनता का सहयोग मिलना इन कार्यक्रमों की अनूठी विशेषता है। जनता इन कार्यक्रमों में सहयोग देने के लिए किस हद तक तैयार है, यह इससे स्पष्ट हो जाता है कि इस कार्यक्रमों पर अब तक सरकार ने जितना व्यय किया है, जनता का योगदान भी इसके ६० प्रतिशत के बराबर है।

जनता का सहयोग प्राप्त करने में गाँवों की संस्थाओं ने बहुत महत्व का काम किया है। विकास-योजनाओं को चलाने में पंचायतों, सहकारी समितियों और यूनियन मंडलों आदि स्थानीय संस्थाओं से काफ़ी सहायता मिल रही है।

सामुदायिक विकास-योजनाएँ और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम अक्तूबर, १९५२ में आरम्भ किया गया था, और पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में देश के एक-चौथाई गाँवों में इन कार्यक्रमों के प्रसार का लक्ष्य रखा गया था। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इन कार्यक्रमों का बराबर विस्तार किया जाता रहा और अब तक १,२०० विकास खण्ड खोले जा चुके हैं, जिनके अन्तर्गत १,२३,००० गाँव हैं। इन गाँवों की आबादी लगभग ८ करोड़ है। इन १,२०० विकास खण्डों में से ७०० में विस्तृत और भरपूर विकास हो रहा है और इन्हें सामुदायिक विकास-योजनाएँ कहा जाता है।

राष्ट्रीय विकास परिषद् ने सितम्बर १९५५ में इस बात की पुष्टि की कि दूसरी योजना में विस्तार सेवा सारे देश में फैल जानी चाहिए और भरपूर विकास के लिए कम से कम ४० प्रतिशत भाग सामुदायिक विकास-योजनाओं के अन्तर्गत आ जाना चाहिए। इसका अर्थ हुआ लगभग ३,८०० नए राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंड खोलना और उनमें से १,१२० को सामुदायिक विकास-योजनाओं में परिवर्तित करना। इस कार्यक्रम पर २६३ करोड़ रुपया खर्च आने का अनुमान है। लेकिन दूसरी योजना में इसके लिए केवल २०० करोड़ रुपए की ही व्यवस्था की गई है।

सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रमों द्वारा दूसरी योजना से देश के करोड़ों लोगों को लाभ पहुँचेगा। इन कार्यक्रमों द्वारा गाँव वाले सहकारिता के आधार पर अपने ही पराक्रम से अत्यधिक आर्थिक उन्नति कर सकते हैं तथा समाज में परिवर्तन कर सकते हैं और इस प्रकार राष्ट्र के महान् प्रयास में भागीदार बन सकते हैं।

★

जहाँ ज़मीन आसमान बदल रहे हैं — [पृष्ठ ११ का शेषांश]

लोकतन्त्र राज्य के लिए शिक्षा के महत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। यह कहते हुए लज्जा आती है कि थारुओं में केवल दो स्नातक हैं। हमारी विकास-योजना के पूर्व इस क्षेत्र में न हाई स्कूल थे और न मिडिल स्कूल। कुछ प्राइमरी स्कूल थे। थोड़े काल में ही जनता की दृष्टि शिक्षा की ओर खींची गई और १६ बुनियादी स्कूल खोले गए।

समाज शिक्षा विभाग ने समाज सेवा में सक्रिय सहयोग दिया है। ४९ शिक्षा प्रसार केन्द्रों और ५१ समाज शिक्षा केन्द्रों को खोल कर जनता में नया जोश पैदा किया गया है। ११ किसान मेलों, ३ ग्रामनेता सेमिनारों एवं १० प्रदर्शनियों का सफल आयोजन किया गया।

योजना कमीशन का यह कहना है कि जिस किसी वस्तु का उत्पादन विकेन्द्रीकृत उद्योग द्वारा किया जा सके उसे केन्द्रीकृत उद्योग द्वारा उत्पन्न न किया जाए। साबुन, दियासलाई, मधुमक्खी पालन और चमड़ेसाज़ी के उद्योग का काम बड़ी तेज़ी से चल रहे हैं। हमारे खण्ड में महिलाओं के लिए विशेष उद्योग केन्द्रों का निर्माण किया जा रहा है।

ये सारी बातें आकाश में नहीं हुई हैं। खण्ड के गाँवों में हुई हैं। विकास योजना को ४ लाख रुपए का जनसहयोग मिल चुका है। यह आप सभी जानते हैं कि हमारा देश करोड़पतियों का नहीं है। एक गरीब मुल्क है, जहाँ लोग चार पैसे बड़ी मुश्किल से पैदा करते हैं। इसीलिए यह ४ लाख का जनसहयोग एक बहुत बड़ी आर्थिक सहायता से कम नहीं है।

यहाँ की जनता में यह भावना पैदा हो रही है कि राष्ट्र निर्माण का अर्थ जन-जन का पुनर्निर्माण है। जहाँ अब यह भावना काम कर रही है, वहाँ धरती पर स्वर्ग उतरने में विलम्ब नहीं है।

इस क्षेत्र के ज़मीन और आसमान बदल रहे हैं।

★

प्रगति के पथ पर

ग्रामीणों द्वारा श्री हेमरशोल्ड का स्वागत

संयुक्त राष्ट्रीय महासचिव श्री डाग हेमरशोल्ड जब फरीदाबाद सामुदायिक विकास-योजना को देखने गए तो वहाँ की जनता ने उनका भव्य स्वागत किया। महासचिव की यह यात्रा ३ घंटे की थी, जिसके दौरान में वह सीही, कोराली और फतहपुर बिलोच गए। ये सभी गाँव दिल्ली के ३० मील के घेरे में हैं।

प्रत्येक गाँव की विकास परिषद् के सदस्यों ने संयुक्त राष्ट्रीय महासचिव का गाँव की सीमा पर गाजे-बाजे के साथ स्वागत किया तथा उनको मालएँ पहनाईं। जिस समय महासचिव गाँव की तंग गलियों में से होकर गुज़रे तो गाँव वालों ने 'संयुक्त राष्ट्र संघ, जिन्दाबाद !' के नारे लगाए तथा महिलाओं ने घरों की छतों पर से उन पर पुष्प वर्षा की। महासचिव का दल जब एक गाँव विशेष में पहुँचा तो एक देसी तोप के गोले छोड़ कर उन्हें सलामी दी गई।

महासचिव जिन स्थानों पर गए उनमें एक गुड़ उत्पादन केन्द्र भी शामिल था। गाँववालों ने उन्हें पीने के लिए गन्ने के ताज़े रस का एक गिलास दिया।

श्री हेमरशोल्ड गाँवों के कई मकानों में गए तथा वहाँ चर्खों एवं दरी बुनने वाले करघों पर लोगों को कार्य करते हुए देखा। उन्होंने उस महिला क्लब को भी देखा, जहाँ महिलाओं को दस्तकारी और अक्षर ज्ञान की शिक्षा दी जाती है।

फतहपुर बिलोच के खुले थियेटर में उन्होंने लोक-नृत्यों को देखा।

कोराली तथा फतहपुर बिलोच की सार्वजनिक सभाओं में उन्हें अभिनन्दन पत्र भेंट किए गए। इन अभिनन्दन पत्रों में संयुक्त राष्ट्र संघ के उन प्रयत्नों की प्रशंसा की गई, जिनसे विश्व शान्ति में योग मिला है।

श्री हेमरशोल्ड ने अभिनन्दन पत्रों का उत्तर देते हुए कहा कि आप ने मेरे प्रति जो हार्दिक स्वागत भाव प्रकट किया है, उससे मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ हूँ। दरअसल, यह आप जैसी जनता का ही सहयोग है, जिसके द्वारा हम विश्व शान्ति एवं समृद्धि प्राप्त कर सकते हैं।

भूमि के कटाव को चुनौती

भारत का कुल क्षेत्रफल ८० करोड़ एकड़ है। इसमें से लगभग २० करोड़ एकड़ भूमि को वायु तथा जल से होने वाले कटाव का सदा खतरा बना रहता है। पिछले २५ वर्षों में कुछ राज्यों में भ-संरक्षण के उपायों का प्रयोग शुरू हो चुका है, जैसे बाँध बनाना, सूखी खेती करना, पैड़ीदार खेत बनाना, आदि। किन्तु देशव्यापी आधार पर भू-संरक्षण का कार्य दिसम्बर १९५३ में शुरू किया गया, जब योजना कमीशन की सिफारिशों के अनुसार केन्द्रीय खाद्य एवं कृषि मंत्रालय में एक केन्द्रीय भू-संरक्षण बोर्ड की स्थापना की गई।

अनुमान है कि १९५५-५६ के अन्त तक ३ लाख एकड़ ज़मीन का सुधार हो चुकेगा। इससे लगभग ७ लाख व्यक्तियों को काम मिलेगा। इन योजनाओं पर कुल ३ करोड़ ५० लाख रुपए खर्च होने का अनुमान है।

अब प्रायः सभी राज्यों में भू-संरक्षण मण्डल स्थापित हो गए हैं और उन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों में प्रारम्भिक सर्वेक्षण करके

योजनाएँ तैयार कर ली हैं। केन्द्रीय मण्डल के परामर्श से वे अपने अधिकारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी कर रहे हैं। राज्य सरकारों की सुविधा के लिए केन्द्रीय मण्डल ने भू-संरक्षण का एक प्रारूप भी तैयार किया है।

२० करोड़ एकड़ भूमि के भू-संरक्षण उपायों में सुधार के लिए ३० वर्ष की योजना बनाई गई है और दूसरी पंचवर्षीय योजना में भी वह सम्मिलित है। प्रत्येक पंचवर्षीय योजना के लिए उत्तरोत्तर ऊँचा लक्ष्य निर्धारित किया गया है—१९६६ तक १ करोड़ १५ लाख एकड़, १९७१ तक २ करोड़ एकड़, १९७६ तक ४ करोड़ एकड़, १९८१ तक ६ करोड़ एकड़ और १९८६ तक ७ करोड़ एकड़। अनुमान है कि इस योजना पर कुल १२ अरब रुपया खर्च होगा।

८ करोड़ से अधिक को लाभ

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन के हाल के आँकड़ों से पता चलता है कि देश भर में २० फरवरी, १९५६ तक १,१४० सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंडों में काम शुरू करने की अनुमति दी गई है। इनसे ८ करोड़ ११ लाख आबादी के १,२४,९५७ गाँवों को लाभ पहुँचेगा।

सितम्बर १९५५ के अन्त तक कुल ८ लाख ९५ हज़ार एकड़ भूमि को खेती योग्य बनाया गया और १५ लाख ५७ हज़ार एकड़ में सिंचाई की व्यवस्था की गई। शिक्षा और समाज-शिक्षा के क्षेत्र में भी काफ़ी प्रगति हुई। सामुदायिक विकास क्षेत्रों में १२ हज़ार नए स्कूल खोले गए और ४,३५९ आम स्कूलों को बुनियादी स्कूलों में बदला गया। सितम्बर १९५५ के अन्त में इन क्षेत्रों में ३० हज़ार प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र चल रहे थे, जिनमें ६ लाख ५ हज़ार प्रौढ़ व्यक्ति शिक्षा ले रहे थे। कुल २८,६३१ मील लम्बी सड़कें बनाई गईं। इनमें से ३,३६१ मील की पक्की सड़कें थीं।

अक्तूबर १९५२ से सितम्बर १९५५ तक लोगों ने नकद, सामान या श्रमदान के रूप में जो योग दिया, उसका मूल्य १८ करोड़ ७० लाख रुपए होता है। इस प्रकार जनता के योग का मूल्य प्रति १ हज़ार व्यक्ति पीछे २,८२८ रुपए बैठता है। इसी अवधि में सरकार ने सामुदायिक विकास क्षेत्रों पर ३१ करोड़ ३ लाख रुपए खर्च किया।

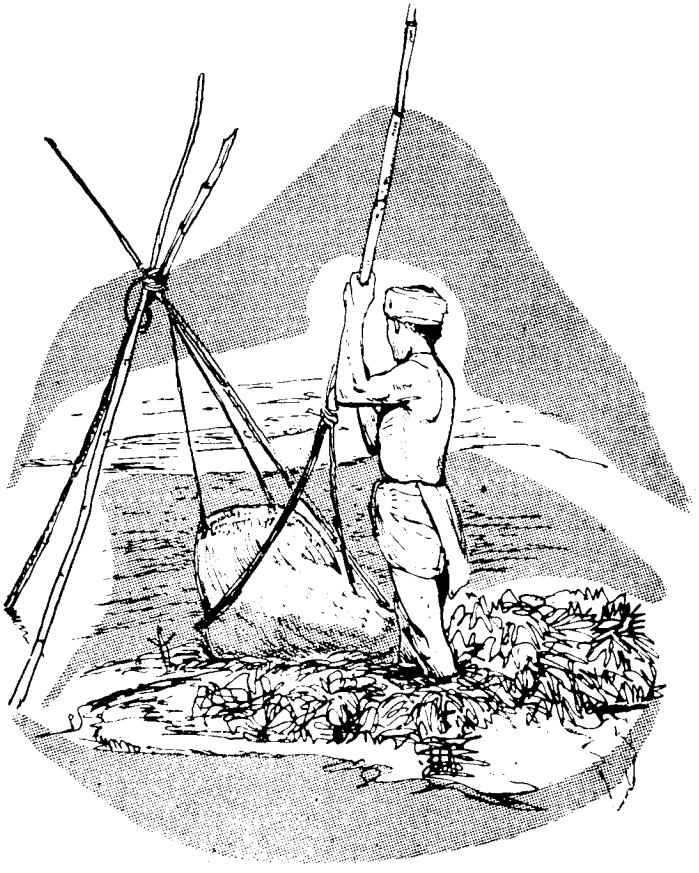

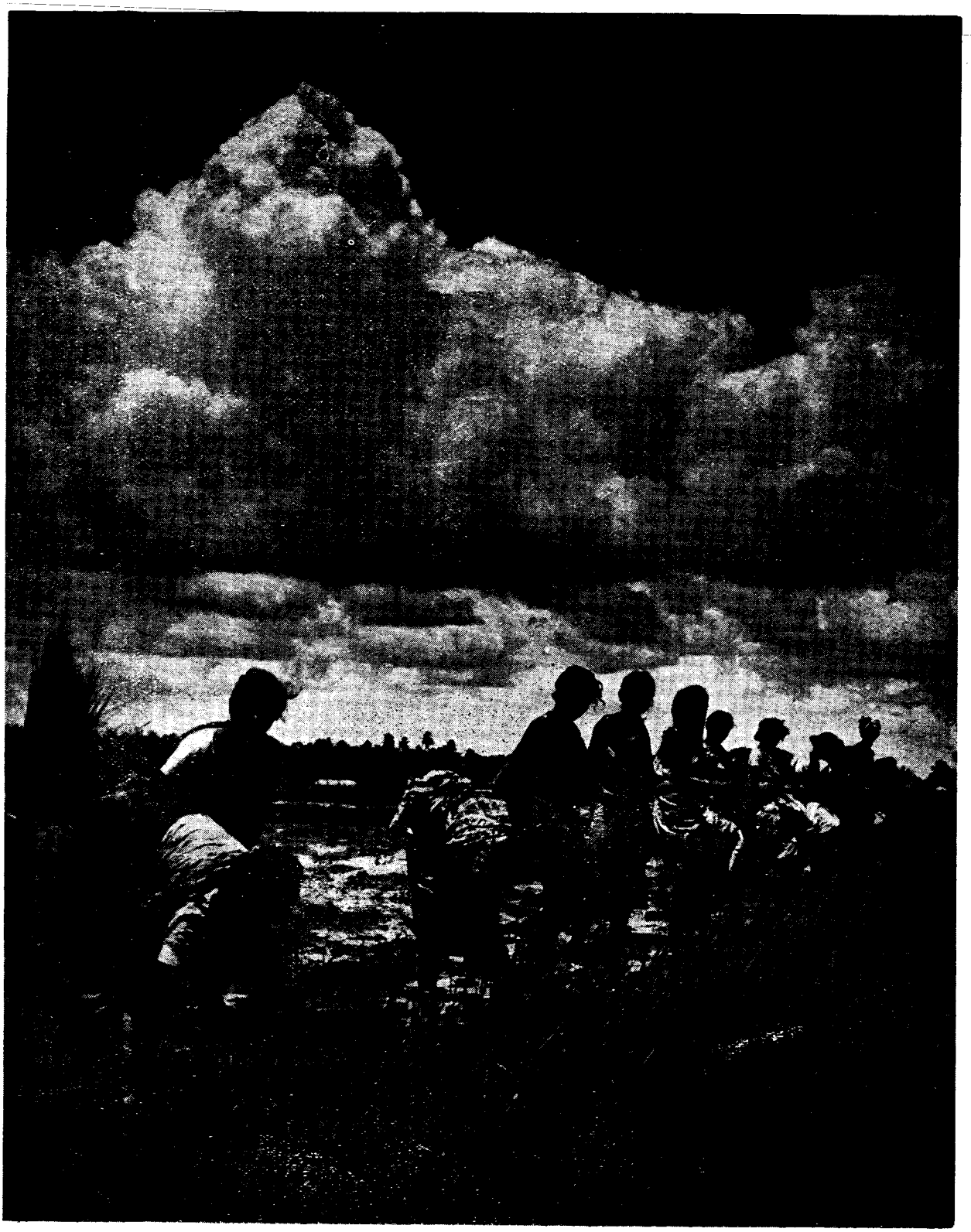

दक्षिण भारत के धान बोने वाले

[फोटो : विश्वव्रत]

भारत की एकता का निर्माण

(सरदार वल्लभ भाई पटेल)

भारत की एकता के निर्माता सरदार पटेल के २७ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाषणों का यह संग्रह हाल ही में प्रकाशित हुआ है।

१५ अगस्त १९४७ को जब भारत स्वाधीन हुआ, तब भारत में ९ प्रान्तों के अतिरिक्त ५८४ रियासतें थीं। इन ५८४ रियासतों में केवल हैदराबाद, काश्मीर और मैसूर यही ३ रियासतें ऐसी थीं, जो आकार और आबादी के लिहाज से पृथक् राज्यों का रूप धारण कर सकती थीं। अधिकांश रियासतें बहुत छोटी थीं और २०२ रियासत तो ऐसी थीं, जिनका क्षेत्रफल १० वर्गमील से अधिक नहीं था। उस पर भी ये सब की सब रियासतें शासन की पृथक् इकाइयां बनी हुई थीं।

भारत के प्रथम उपप्रधान मन्त्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने दो वर्षों के भीतर ही सम्पूर्ण भारत को एक बना दिया। उक्त ५८४ रियासतों का ५,८८,००० वर्ग मील क्षेत्रफल और १० करोड़ के लगभग आबादी इस अल्प-काल ही में भारत के आन्तरिक भाग बन गए। उसी तरह, जिस तरह भारत के अन्य राज्य हैं। हैदराबाद, मैसूर और काश्मीर को पृथक्-पृथक् और अन्य कितनी ही रियासतों के संघ बनाकर उन्हें 'बी' श्रेणी के राज्य बना दिया गया। सैकड़ों छोटी-छोटी रियासतें आसपास के बड़े राज्यों में मिला दी गईं। परिणाम यह हुआ कि भारत भर में पूर्ण प्रजातन्त्र स्थापित हो गया और सन् १९५२ का निर्वाचन समूचे देश में बालिग मताधिकार के आधार पर सम्पन्न हुआ।

इस नवीन भारत की एकता के निर्माण में सरदार पटेल के इन २७ भाषणों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वाधीनता के पहले २½ वर्षों की भारतीय समस्याओं पर इन भाषणों में जो प्रकाश डाला गया है, उसका महत्त्व ऐतिहासिक है। ये भाषण देश के लिए चिरकाल तक प्रकाश स्तम्भ का काम देते रहेंगे।

इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक ग्रन्थ का मूल्य प्रचार के उद्देश्य से बहुत कम रक्खा गया है। पुस्तक में ३५० बड़े आकार के पृष्ठों के अतिरिक्त १६ पृष्ठ सरदार पटेल के सुन्दर चित्र और नवीन भारत का एक मानचित्र भी दिया गया है।

मूल्य : सजिल्द ५) रुपया

प्रकाशक :

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट,

दिल्ली-८

Printed by the Albion Press, Kashmere Gate Delhi-6, and published on behalf of Community Projects Administration by the Publications Division, Delhi-8.